सत्साहित्य प्रकाशन

नव-प्रभात

[अशोककालीन ऐतिहासिक नाटक]

विष्णु प्रभाकर

१९६०
सस्ता साहित्य मण्डल, नई दिल्ली

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री सस्ता साहित्य मंडल
नई दिल्ली

आठवीं बार : १९६
मूल्य
एक रुपया

मुद्रक
बालकृष्ण एम ए
युगान्तर प्रेस
डफरिन पुल दिल्ली

युद्ध से त्रस्त
बीसवीं सदी
की
मानवता
को

आमुख

इस नाटक के लिखे जाने का एक इतिहास है। मुझे इतिहास से प्रेम है, परन्तु फिर भी उसकी कथावस्तु को लेकर मैंने शायद ही कोई कहानी या एकांकी लिखा हो। वर्तमान युग में ही लिखने के लिए इतनी सामग्री है कि भूतकाल की ओर ध्यान नहीं जाता। आज का युग नाना विध रचनाओं की मांग करता है। आज की समस्या को सुलझाना चाहता है और उसकी गति इतनी तेज है कि रुककर पीछे देखने का अवकाश ही नहीं मिलता। फिर भी यह नाटक लिखा गया।

गत वर्ष आकाशवाणी के दिल्ली स्टेशन के नारी-विभाग से रेडियो-रूपकों का एक क्रम शुरू किया गया था। उसका शीर्षक था— 'मैं भी मानव हूँ' और उसका उद्देश्य पुरातन इतिहास के सुप्रसिद्ध व्यक्तियों की जीवन झांकी देते हुए, यह बताना था कि उन्होंने कुछ भी क्यों न किया हो वे थे मानव। 'अशोक' उन व्यक्तियों में सर्वप्रथम था और उसपर कुछ लिखना था। इस नाटक का प्रथम अंश लगभग वही रूपक है जो मैंने दिल्ली रेडियो के लिए लिखा था। बाद में यह अनेक बार प्रसारित हो चुका है।

कुछ दिन बाद आकाशवाणी के उस विभाग से, जहां से भारत के अतिरिक्त अन्य देशों के लिए कार्यक्रम प्रसारित होते हैं, एक और क्रम शुरू हुआ। उसका शीर्षक था—'इतिहास का एक पृष्ठ'। उसमें भारत के इतिहास की कुछ गौरवमयी कहानियों की झांकी दी जाती थी। उसके लिए मैंने अपनी बारी में 'अशोक' को चुना और 'देवानांप्रिय' के नाम से एक रेडियो रूपक लिखा। उसमें दिखाया गया था कि अशोक 'धर्म-विजय' लिखवा रहा है और अपने जीवन की घटनाओं को स्पष्ट करता

जाता है। दूसरे अंक की कथा उसी रूपक से ली गई है। एक शिलालेख में ये शब्द आते हैं—"जहां लोगों का इस प्रकार वध, मरण और देश निकाला हो, ऐसा जीतना न जीतने के बराबर है।" इन शब्दों को बोलते बोलते अशोक को कलिंग-युद्ध की याद आ जाती है और उसे याद आता है कि ये शब्द कलिंग की राजकुमारी ने कहे थे। इतिहास में इस बात की चर्चा नहीं आती। आ भी नहीं सकती। राजकुमारी मेरी कल्पना की सृष्टि है पर यह नई कल्पना नहीं है। पहले भी कुछ लेखक ऐसी कल्पना कर चुके हैं। श्री जगदीशचन्द्र माथुर के एकांकी 'जय-पराजय'[1] में यह राजकुमारी उपस्थित है यद्यपि संसार के मनुष्यों की भांति मेरी और उनकी कल्पना-सृष्टि में अंतर है। कलिंग-युद्ध के बाद अशोक के जीवन में जो महान् परिवर्तन हुआ उसके लिए निस्सन्देह कुछ प्रबल कारण रहे होंगे। कुछ ऐसी घटनाएं घटी होंगी, कुछ ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न हो गई होंगी कि जिन्होंने अशोक के हृदय पर प्रबल आघात किये होंगे और उसे युद्ध से घृणा हो गई होगी। मैंने राजकुमारी की सृष्टि इसी दृष्टि से की है।

तीसरे अंक में जो कहानी है वह इस दृष्टिकोण का चरम-बिंदु है। बिना इस प्रकार के प्रबल आघात के अशोक के हृदय में इतना गहन संघर्ष नहीं मचा होगा जो भारत के इतिहास को पलट दे। यह अंक मेरी कहानी 'जीवन-दीप' का रूपांतर है। दिल्ली की प्रसिद्ध साहित्यिक संस्था 'शनिवार-समाज' में मैंने इस कहानी को पढ़ा था। इस पर अच्छी चर्चा हुई थी। कुछ लोगों ने कुमार की आत्महत्या पर आपत्ति की। कुमार की कल्पना कोई नई कल्पना नहीं है परंतु अधिकांश लेखकों ने उसे या तो कलिंग-युद्ध में वीरतापूर्वक लड़ते-लड़ते प्राण देते चित्रित किया है या धृष्टता के कारण अशोक द्वारा उसको मृत्यु-दंड दिलाया है परंतु मैंने अशोक द्वारा मृत्यु-दंड दिलाकर दिखाया है कि पश्चात्ताप के कारण अशोक राजकुमार को फिर क्षमा कर देता है लेकिन राजकुमार सम्राट् अशोक की क्षमा ग्रहण नहीं करता और कटार मारकर आत्महत्या कर

१ यह एकांकी श्री सुमित्रानंदन पंत द्वारा संपादित 'रूपाभ' में प्रकाशित हुआ था।

लेता है। उसकी आत्म-हत्या का उद्देश्य कायरता नहीं है बल्कि अशोक के हृदय में पश्चात्ताप की जो आग सुलगने लगी है, उसे तेज करना है। यह कल्पना भी मूल में मेरी नहीं है। उड़िया की लेखिका श्रीमती सरस्वतीदेवी पाणिग्राही के नाटक 'कलिंग-विजय' में यही कल्पना की गई है। हां उस कल्पना का उद्देश्य मेरे उद्देश्य से कुछ भिन्न है। इस प्रकार राजकुमार की आत्महत्या की कल्पना [illegible] है। वह इतिहास की दृष्टि से असत्य प्रमाणित हो सकती है परन्तु अकारण प्रमाणित नहीं हो सकती। इतिहास की घटनाओं को तोड़ने-मरोड़ने अथवा उसके मनमाने रूप लगाने का हमें अधिकार नहीं है परन्तु परिस्थितियों के अनुसार उचित कल्पना करने का अधिकार अवश्य है। हां इस प्रकार की कल्पना से ऐतिहासिक सत्य को बल मिलना चाहिए। इस कल्पना से अशोक की हृदय-परिवर्तन की ऐतिहासिक घटना को यथेष्ट बल मिलता है। उसे अपनी पाशविक वृत्ति के [illegible] का पता लगता है।

एक और नई कल्पना इस नाटक में की गई है। साधारणतया महेन्द्र और संघमित्रा अशोक के पुत्र और पुत्री प्रसिद्ध हैं परन्तु मैंने उन्हें अशोक के भाई-बहन बताया है। अशोक के परिवार के बारे में इतिहास निर्विवाद रूप से कुछ नहीं बताता। जन-श्रुतियों, गाथाओं तथा भारत और लंका के बौद्ध-ग्रन्थों के आधार पर ही इतिहासकारों तथा दूसरे लेखकों ने उसका निरूपण किया है। 'दिव्यावदान' तथा 'महावंश' उनमें प्रमुख हैं। अशोक के शिला-लेखों, स्तम्भ-लेखों तथा गुहा-लेखों में उसके अनेक भाई-बहनों, रानियों और पुत्र-पुत्रियों के होने का पता लगता है परन्तु नाम एक-दो ही के आए हैं।[1] उदाहरण के लिए 'महावंश' के अनुसार असंधिमित्रा अशोक की प्रधान रानी थी। इसके अनुसार एक रानी जिसका नाम 'देवी' था उज्जैन में रहती थी। महेन्द्र और संघमित्रा उसकी संतान थे। 'दिव्यावदान' (पृ० ४०७-८८) सम्राट् की एक रानी का नाम तिष्य-रक्षिता बताता है। कहा जाता है कि इस रानी से सम्राट् ने बुढ़ापे में विवाह किया था और उसके [illegible] पुत्र कुणाल की आंखें इसी रानी ने

१ [illegible] ८८। [illegible] १९५८

निकलवाई थीं। धाम्म कुमारी और पद्मावती भी अशोक की रानियाँ बताई जाती हैं। पद्मावती का नाम गाथाओं में आता है और यह कुणाल की माता बताई गई है। कहीं-कहीं कुणाल की माता का नाम असंधिमित्रा भी आता है, परंतु तीसरे स्तम्भ-लेख (चतुर्थ) में जिस रानी का नाम आता है वह 'कारुवाकी' है।

"देवानाम्प्रिय के अनुशासन से सर्वत्र महामात्रों को यह कहा जाय कि यहाँ जो कुछ भी दान द्वितीय रानी ने किये हों—चाहे आम्रकुंज चाहे धर्मशाला चाहे अन्य कुछ, सबकी गणना रानी के नाम किये जायें। यह द्वितीय रानी कारुवाकी तिवाला की माता की विनय है।"

मैंने अपने नाटक में इसी 'द्वितीय रानी कारुवाकी' को लिया है। संभवतः यह रानी अशोक को विशेष प्रिय थी। इसी लेख में कारुवाकी के पुत्र 'तिवाला'[1] का नाम भी आया है। इस पुत्र के अतिरिक्त महेंद्र उज्जैनी कुणाल और जालौका भी अशोक के पुत्र बताये गए हैं। हमें यहाँ महेंद्र की चर्चा करनी है क्योंकि इसके अतिरिक्त और किसी का संबंध इस नाटक से नहीं है। "उत्तरी बौद्ध अनुश्रुति महेंद्र को अशोक का भाई कहती है पर सिंहली वृत्तांतों के अनुसार वह उसका पुत्र था।" (भारतीय इतिहास की रूप रेखा जयचंद्र विद्यालंकार भाग १ खण्ड ४ प्रकरण १९ ११९ प पृष्ठ ६७)। सिंहली वृत्तांत से तात्पर्य 'महावंश' से है। यह सिद्ध हो चुका है कि उसके वृत्तांत असत्य भले ही न हों परंतु वे अनिवार्य रूप से अतिरंजित हैं। बौद्धधर्म का अशोक पर क्या प्रभाव पड़ा यह बताने के लिए उस प्रारंभिक जीवन को बढ़ा कर चित्रित किया गया है। लिखा गया है कि अपने ९९ भाइयों की हत्या करके अशोक गद्दी पर बैठा था। अब यह सिद्ध हो चुका है कि ऐसी कोई बात नहीं थी। हाँ केवल एक भाई से उसका झगड़ा हुआ था। वह उसका सौतेला बड़ा भाई सुसीम था। संभवतः यह पिता का लाड़ला था या

[1] कुछ विद्वानों का मत है कि यह कारुवाकी पुत्र या दान का नाम है। ध्यानपूर्वक... के अनुसार अतिरिक्त नाम नहीं दिया गया।
[2] कहीं टीवर भी।

शायद बौद्ध-धर्म के प्रति रुझान होने के कारण वह मगध की राजगद्दी पर बैठने योग्य नहीं समझा गया। कुछ भी हो इसी एक भाई से अशोक का झगड़ा हुआ था। उसके शेष भाई उसके राज्यकाल में उपस्थित थे। सातवें स्तंभ लेख में लिखा है—

"यहां (पाटलिपुत्र) और बाहर के मेरे नगरों में वे महामात्रगण विविध भांति के कई प्रकार दानधर्म कार्यों में लगे हैं तथा पुण्य कार्यों की बढ़ती के हेतु और धर्मानुष्टि के लिए मैंने आदेश दिया है वे रानियों के और मेरे अतिरिक्त और मेरे पुत्रों और अन्य देवी-कुमारों के दान कार्य के लिए नियत किये जायें।

श्री भगवतीप्रसाद पांथरी ने अपनी पुस्तक 'अशोक' में इस लेख पर टिप्पणी करते हुए लिखा है—"इस संदर्भ के 'देवीकुमारों' को अशोक की रानियों के पुत्र न समझे जाना चाहिए अपितु ये देवीकुमार अशोक के पिता की रानियों अथवा देवियों के पुत्र थे—अर्थात् ये कुमार अशोक के सौतेले भाई थे।[2]

पांचवें प्रधान शिलालेख में यह बात और भी स्पष्ट रूप से कही गई है।

"ये (धर्म महामात्र) यहां (अथवा पाटलिपुत्र) तथा बाह्य दूरस्थ नगरों में मेरे तथा भाइयों और बहनों के अंतःपुर और मेरे अन्य संबंधियों के यहां सर्वत्र नियुक्त हैं।

यही नहीं गाथाओं के अनुसार अशोक अपने भाई-बहनों के प्रति बड़ा उदार और कृपालु था। वह उनसे बहुत स्नेह करता था विशेषकर महेंद्र को लेकर, उसके स्नेह की अनेक कथाएं प्रचलित हैं। एक गाथा में आता है कि महेंद्र अशोक का सौतेला भाई था और बड़ा क्रूर, संयम हीन और अमर्यादित था। अशोक ने उसे समझाया और भाई के स्नेह तथा पिता के प्रेम की बात दिखाकर समझाया। महेंद्र ने अपना अपराध स्वीकार कर लिया और अंत में वह 'अर्हत' हुआ। सम्राट् ने महेंद्र के रहने के लिए पाटलिपुत्र में एक गुफा बनवाई थी। प्रसिद्ध चीनी यात्री

---

[1] पृष्ठ ७-११ (अंग्रेजी इस शिलालेख का अनुवाद EP Indica II 276 है।)

[2] पृष्ठ १० अशोक—भगवतीप्रसाद पांथरी।

फाहियान के अनुसार अशोक का भाई पहाड़ी पर एकांतवास किया करता था। सम्राट् चाहते थे कि वह राजप्रासाद में आकर रहे किंतु वह नहीं आया। तब सम्राट् ने पाटलिपुत्र के पास ही उसके रहने के लिए एक गुफा बनवा दी। यद्यपि फाहियान ने इस भाई का नाम नहीं लिया है तथापि संभवतः यह उपरोक्त महेंद्र ही है। ह्युयान चुआङ (हुएनसांग) ने भी महेंद्र को अशोक का विमातृज भाई लिखा है और इसी कथा का विस्तार से वर्णन किया है।[1] अन्य ग्रंथों में महेंद्र की कथा दूसरे ढंग पर दी गई है। पालीग्रंथों में उसे तिष्य कहा गया है, 'दिव्यावदान' में वितासोक लिखा है और कुछ चीनी ग्रंथ उसे सुदत्त और सुगात्र भी कहते हैं।

जो हो, उपरोक्त उद्धरणों से यह स्पष्ट है कि महेंद्र अशोक का भाई था। वह भोगी था और बौद्ध भी हो गया था। कुछ विद्वान् मानते हैं कि एक महेंद्र अशोक का पुत्र भी था। कुछ किसी निश्चय पर नहीं पहुंचते। 'भारतीय इतिहास की रूपरेखा'[5] में श्री जयचंद्र विद्यालंकार ने भी अनिश्चित बात लिखी है—"संगीति पूरी होने पर तिस्स ने अनेक प्रदेशों में बौद्ध शासन पहुंचाने को प्रचारक भिक्षुओं के वर्ग भेजे। अशोक का अपना बेटा या भाई महिंद (महेंद्र) भी उनमें से एक वर्ग का नेता था।"

ऐसी अनिश्चित परिस्थिति में मैंने महेंद्र को अशोक का भाई माना है और इस मान्यता का आधार उत्तरी बौद्ध-ग्रंथ हैं। इन्हीं ग्रंथों के आधार पर मैंने अशोक के धर्मगुरु का नाम उपगुप्त लिया है। कहीं-कहीं 'तिस्स' नाम भी आता है। संभवतः ये दोनों एक ही व्यक्ति थे। मैंने ही नहीं, कुछ और लेखकों ने भी महेंद्र को भाई स्वीकार किया है और महेंद्र को भाई मान लेने पर संघमित्रा स्वतः ही अशोक की बहन बन

१ Si yuki Volume II P 91 'अशोक' पृष्ठ ११ पर उद्धृत।
२ हुएनसांग का भ्रमण-वृत्तांत।
३ अशोक—१ भाग पृष्ठ १२ पर।
४ खण्ड १ जिल्द ४ प्रकरण १३ §११२ पृष्ठ ६६५।
५ भारतीय इतिहास की रूपरेखा पृष्ठ ६६५।

जाती है क्योंकि इस बात पर सब एकमत हैं कि संघमित्रा महेन्द्र की बहन थी। संघमित्रा को अशोक की बहन मानने का एक और भी कारण है। 'महावंश' के अनुसार जिसमें महेन्द्र और संघमित्रा को अशोक का पुत्र-पुत्री माना है संघमित्रा का विवाह हो चुका था। उसके पति का नाम अग्निब्रह्मा तथा पुत्र का नाम सुमन था। अग्निब्रह्मा और सुमन के बारे में अनेक कथाएं आती हैं और लिपियां का ऐसा घोटाला है कि कुछ भी विश्वास करने को जी नहीं चाहता। 'महावंश' में लिखा है कि संघमित्रा ५९ वर्ष तक वे रहीं। मृत्यु के समय इसी ग्रन्थ में दूसरे स्थान पर लिखा है कि संघमित्रा अशोक के अभिषेक के १८ वें वर्ष लंका गई (महावंश प्रकरण २० वां)। इसके अनुसार कलिंग-युद्ध के समय उसकी आयु १ वर्ष की थी क्योंकि कलिंग-युद्ध अभिषेक के ८ वर्ष बाद हुआ। 'महावंश' के अनुसार ही निकली इसके समय संघमित्रा की आयु १८ वर्ष की थी और वह अभिषेक के छठे वर्ष संघ में प्रविष्ट हुई थी अर्थात् कलिंग-युद्ध से दो वर्ष पूर्व (महावंश प्रकरण ५ वां) जो साधारण मान्यता के अनुसार ठीक नहीं है क्योंकि युद्ध से पूर्व अशोक ब्राह्मणधर्म का अनुयायी था पर यदि इस बात को ठीक मान भी लें तो इसके अनुसार युद्ध के समय संघमित्रा की आयु बीस वर्ष की आती है।[1] इससे स्पष्ट है कि 'महावंश' की प्रत्येक बात प्रामाणिक और पूर्ण रूप से विश्वसनीय नहीं है।

इसके अतिरिक्त मैंने इस नाटक में संघमित्रा और कलिंग-युवराज के प्रणय-सम्बन्ध का वर्णन किया है। इतिहास इस संबंध में मौन है। बौद्ध-ग्रंथों, गाथाओं तथा अनुश्रुतियों में भी इसका उल्लेख मुझे कहीं नहीं मिला परन्तु उड़ीसा की लेखिका श्रीमती सरस्वतीदेवी पाणिग्राही ने अपने नाटक 'कलिंग-विजय' में इस प्रणय-गाथा का वर्णन किया है। यद्यपि उन्होंने वहां संघमित्रा को अशोक की पुत्री माना है तथापि महावंश की तिथियों के अनुसार यह संभव नहीं हो सकता क्योंकि यदि उसकी आयु १ वर्ष की मानी जाय तो प्रणय का प्रश्न ही नहीं उठता और २० वर्ष

[1] देखिए पृष्ठ २१४ २१ और ११४ 'अशोक'—ले० डॉ० भाण्डारकर

छोटी।

की मानी जाय तो उसका पति अग्निब्रह्मा और पुत्र सुमन उसके साथ रहे होंगे। ऐसी अवस्था में भी प्रणय नहीं हो सकता। इसलिए 'महावंश' की किसी भी बात को न मानकर मैंने संघमित्रा को अशोक की छोटी बहन माना है। निस्संदेह वह सौतेली बहन थी क्योंकि महेन्द्र अशोक का सौतेला भाई था। इस कल्पना का प्रयोग भी मैंने अशोक के हृदय पर प्रथम आघात दिखाने के लिए किया है।

इतिहास लेखों और गाथाओं में अशोक के कई भाइयों का नाम आता है परंतु बहन का नाम केवल 'महावंश' में आता है। प्रकरण ५ में लिखा है—

"रात को स्वप्न में राजा ने देखा कि उसकी आत्मा लोहकुम्भिया नरक में प्रवेश कर गई है। राजा बड़ा व्याकुल हुआ। इस संताप को मिटाने के लिए उसकी छोटी बहन अपनी भिक्षुणी संघमित्रा जो अर्हन्त हो चुकी थी वायु द्वारा पहुंची और राजा से बोली—'जो काम तुमने किया है वह बड़े पाप का है धर्म के प्रमुख आचार्यों से इसका प्रायश्चित्त करो उनके साथ सहयोग प्रदान कर सत्य धर्म (बौद्ध धर्म) का पक्ष ग्रहण करो। ऐसा करने से तुम्हें शांति मिलेगी।' लिखा है अशोक ने बहन के उपदेश का अक्षरशः पालन किया।

यह कथा सच हो या न हो परंतु इससे इतना स्पष्ट है कि अशोक की बहन थी। शिलालेख भी जिनका जिक्र ऊपर आ चुका है इस बात की पुष्टि करते हैं। इस प्रकार मेरी कल्पनाएँ कोरी कल्पनाएँ नहीं हैं। उनकी नींव सुदृढ़ है।

जहाँ तक नाटक की मूल कथावस्तु का संबंध है उसके विषय में दो मत नहीं हैं। कलिंग-युद्ध एक ऐतिहासिक घटना है और उसी तरह अशोक का हृदय-परिवर्तन भी। उसकी धर्म लिपियों की भाषा उसके पश्चात्ताप की साक्षी है। यह पश्चात्ताप किसी कायर की कापुरुषता का परिचय नहीं देता बल्कि एक महान् राजनीतिज्ञ और एक महान् मानव

---

१ 'अशोक' भण्डारकर कृत पृष्ठ ११, १११

के हृदय-मंथन की झांकी देता है। कलिंग-युद्ध में क्या हुआ इसका वर्णन [illegible] प्रधान शिलालेख में किया गया है—

"देवताओं के प्रिय प्रियदर्शी राजा ने अभिषिक्त होने के आठ वर्ष [illegible] कलिंग को विजय किया। यहां से डेढ़ लाख आदमी बाहर ले जाये गए, एक लाख आदमी आहत हुए और इससे कई गुना वहीं पर मरे। उसके पश्चात् अब कलिंग साम्राज्य में मिला लिया गया (अथवा कलिंग विजय हुआ) तब से देवताओं के प्रिय का धर्माचरण बढ़ा धर्म के स्नेह की वृद्धि हुई और धर्म का अत्यधिक विस्तार हुआ।

इसी शिला-लेख में आगे [illegible] फिर लिखा है—

"जितने मनुष्य कलिंग-युद्ध में घायल हुए, मरे या कैद किये गए, उनके [illegible] या [illegible] हिस्से का नाश भी अब महाराज अशोक के लिए बड़े [illegible] का कारण होगा।"[1]

"जो धर्म की विजय है उसे ही देवताओं का प्रिय मुख्य मानता है। और वह देवताओं के प्रिय का यहां (अपने विजित में) और सभी पड़ोसियों में—सैकड़ों योजन पर जहां (पश्चिमी एशिया) में अंतियोक नामक यवन राजा है और उस अंतियोक के परे चार राजा हैं तुरमय नामक, अंतिकिन नामक, मग नामक और अलिक सुंदर नामक (तथा) नीचे (दक्षिण तरफ) चोड़ पांड्य और ताम्रपर्णीवालों तक ऐसे ही इधर राज विषय में (इस राज्य के अधीन) यवन-कंबोजों में नाभक नाभपंक्तियों में भोज पितिनिकों में आंध्र-पुलिंदों में (सभी जगह) —प्राप्त हुआ है। सभी जगह देवताओं के प्रिय धर्मानुशासन का अनुसरण करते हैं। जहां देवताओं के प्रिय के दूत नहीं भी जाते हैं वे भी देवताओं के प्रिय का धर्म विधान और धर्मानुशासन को सुनकर धर्म का अनुविधान (आचरण) करते हैं और करेंगे। और इस प्रकार सब जगह जो विजय प्राप्त हुई है वह प्रीति रसपूर्ण है।"[2]

अशोक [illegible]

१ बौद्धकालीन भारत—[illegible]

२ भारतीय इतिहास की रूपरेखा—[illegible]

यह परिवर्तन निःसंदेह अद्भुत और महान् है, परंतु एकदम ही नहीं हो गया था। यह कैसे हुआ इसका सुंदर और स्पष्ट वर्णन अशोक ने कलिंग-विजय के बाद चौथे बरस प्रकाशित अपनी पहली धर्म-लिपि (अभिलेख) में इस प्रकार किया है—

"अढ़ाई बरस से अधिक बीते कि मैं श्रावक (उपासक) हुआ हूं पर मैंने अच्छा प्रक्रम (उद्यम) नहीं किया। बरस से ऊपर हुआ जब मैं संघ के पास पहुंचा और खूब प्रक्रम करने लगा। इस बीच जंबूद्वीप (भारतवर्ष) के मनुष्य जो देवताओं से मिला दिया है यह प्रक्रम का फल है। बड़े ही लोग यह फल पा सकते हों सो नहीं। छोटा आदमी भी प्रक्रम से विपुल स्वर्ग पा सकता है। इसीलिए यह (आदेश) सुनाया गया कि छोटे-बड़े सभी प्रक्रम करें। अंत भी जान जायं कि (हमारा) यह प्रक्रम है और चिरस्थायी हो। यह कार्य बढ़ेगा, निश्चय से बढ़ेगा, खूब बढ़ेगा, दिन दूना रात चौगुना बढ़ेगा।

एक और प्रश्न उठ सकता है कि आखिर अशोक ने कलिंग विजय क्यों किया। यद्यपि इस नाटक की कथावस्तु से उसका कोई प्रत्यक्ष संबंध नहीं है तो भी यह प्रसंग अप्रासंगिक नहीं है। इसका उत्तर भी बड़ा सरल है। अशोक कुशल राजनीतिज्ञ था और चाणक्य की नीति का अनुसरण करता हुआ वह समूचे भारत को मौर्य-साम्राज्य के अन्तर्गत लाना चाहता था। इतिहास का अच्छी तरह अध्ययन करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि कलिंग नंदों के पूर्व मगध के अधीन था। चन्द्रगुप्त ने जब नंदों के विरुद्ध विद्रोह किया तब वह स्वतंत्र हो गया। चाणक्य ने चन्द्रगुप्त और फिर बिंदुसार के समय में इस प्रदेश को साम्राज्य में मिलाने की निरंतर कोशिश की। तिब्बत के लामा तारानाथ के बौद्ध धर्म के इतिहास (पृ. १८) में लिखा है—"उसने [illegible]" राजधानियों के राजाओं और मंत्रियों को उखाड़ डाला और एक बड़े युद्ध के बाद पूर्वी और पश्चिमी समुद्रों के बीच समूची भूमि को राजा बिंदुसार की अधीनता में ला दिया। परन्तु वह कलिंग को न जीत सका। यद्यपि वह दीन होकर भी मौर्य विजित से घिर गया था तो भी उसकी स्वतंत्रता, शक्ति और सम्पन्नता के कारण वह मगध-साम्राज्य

में मोहा लेता रहा। चाणक्य की चतुरंग राज्य-नीति को पूर्ण करने के लिए कलिंग को विजय करना आवश्यक था और यही अशोक ने किया। यदि वह ऐसा न करता तो कलिंग अपनी समृद्धि और शक्ति के कारण मौर्य-साम्राज्य के लिए घातक बन जाता।

साम्राज्यवाद की यह नीति बुरी थी या अच्छी यह विचार यहाँ असंगत है फिर भी इतना स्पष्ट है कि कलिंग-युद्ध की क्रूरता और बर्बरता से अशोक का हृदय व्यस्त हो उठा था और उसने भविष्य में युद्ध न करने की घोषणा की। भेरी-नाद धर्म-घोष में परिवर्तित कर दिया गया। इस प्रकार साम्राज्य बना रहा परन्तु उसका आधार हिंसा के स्थान पर उदारता, सहिष्णुता और मृदुता हो गये। आज का युग भी बहुत-कुछ अशोक-कालीन युग के समान है। साम्राज्य-लिप्सा ने संसार को त्रस्त कर रखा है। शस्त्र-शक्ति का उन्माद प्रबल है और उसके भयपान में मानवता आहत होकर सिसक रही है। अशोक ने जो संदेश अपने वंशजों के लिए छोड़ा था वह हमारे लिए कितना उपयुक्त है—

"भेरी घोष और भयानक शस्त्रों द्वारा विजय करने का विचार न करें। उन्हें उदारता (शांति) और सहिष्णुता अपना दंड मानें (मृदुता) में आनंद मानना चाहिए। यदि उन्हें विजय में आनंद आया तो धर्म विजय को ही विजय समझना चाहिए। उसी विजय में आनंद मानना चाहिए।

परन्तु इस संदेश का अर्थ निष्क्रियता नहीं है, क्रिया है और इस नाटक की मिलनी के शब्दों में—"क्रिया में शक्ति होती है। शक्ति जीवन की ज्योति है। वह प्रकाश भी देती है और जलाती भी है। यह दूसरी बात है कि कुछ लोग पतंगे बन जाते हैं और कुछ अपनी दुर्बलता था।

अशोक में इस नाटक की यही कहानी है। मेरे न चाहने पर भी यह लिखा गया। तीन बार तीन स्वतन्त्र व्यक्तियों के अनुरोध से लिखा जाने के कारण मैंने नाटक का नाम ही अंकों में पूर्ण कर दिया है। इस प्रकार दृश्यों का प्रयोग बिल्कुल नहीं हुआ है। हाँ कथा कालों का स्पष्टीकरण करने के लिए 'आशीर्वाद' और 'उपसंहार' जोड़ दिये हैं पर उनका बिना

भी नाटक अपने-आपमें पूर्ण है ।

अंत में जो इस नाटक के सृजन के कारण हैं उन सबका मैं आभारी हूं विशेषकर आकाशवाणी के अधिकारियों का । भाई चिरंजीत ने कृपा पूर्वक जो गीत लिख दिए हैं उनके बिना तो नाटक का रस सीमित हो जाता । उनका मैं बहुत ही कृतज्ञ हूं । मैं उन विद्वानों और कलाकारों का भी आभारी हूं जिनके परिश्रम से संचित सामग्री का मैंने लाभ उठाया है ।

दूसरा संस्करण

इस वर्ष १९५६ में विश्व तथागत बुद्ध की २५ वीं जयंती मना रहा है । इस अवसर पर 'नव-प्रभात' का दूसरा संस्करण होना मेरे लिए सौभाग्य की बात है । आज से पूर्व शायद ही कभी शांति की आवश्यकता पर इतना जोर दिया गया हो । सचमुच भावी युद्ध की सर्वनाशिनी कल्पना से शंकित विश्व अशोक के चरित्र को जितना आज समझ सकता है उतना शायद और कभी नहीं ।

रंगमंच की दृष्टि से नाटक में कुछ संशोधन किये गए हैं । आवश्यकतानुसार और भी परिवर्तन किए जा सकते हैं ।

पांचवां संस्करण

इस संस्करण में भाषा की दृष्टि से एक-दो संशोधन किए हैं तथा रंगमंच की दृष्टि से कुछ सूचनाएं भी दी हैं ।

जुलाई १९५८ —विष्णु प्रभाकर

समय

कलिंग-युद्ध की अंतिम रात ईसा से २६५ वर्ष पूर्व का भारत।

स्थान

कलिंग की राजधानी तोसली (वर्तमान धौली जि० पुरी) के पास युद्ध भूमि।

नव-प्रभात

प्रस्तावना

(रंगमंच पर अस्तगामी सूर्य की लालिमा के कारण प्रकाश मंद पड़ता जा रहा है। ग्रामवासी मृत्यु की तरह अन्धकार जैसे जैसे ग्रसता जाता है। दूर पृष्ठभूमि में सैन्य शिविर से मानो शोणित के बादल उठकर आकाश में छा गए हैं। कभी अग्नि की लपटें ऐसे धुंआ फेंकती जान पड़ती हैं जैसे महानाश आकाश को निगल जाना चाहता हो। कभी पर फड़फड़ाते हुए गिद्ध[1] एक भयंकर अपशकुन की तरह निकल जाते हैं। गिरोह से अलग हुआ कोई गीदड़[2] चोर की तरह घूमता हुआ आता है और चला जाता है। वातावरण में न कोलाहल है, न उस जगह पर शांति भी नहीं है केवल भयानक मौन है जैसे किसी ने चीत्कार का गला घोंट दिया हो। जैसे महानाश की लीला

[1] [2] साधारणतया गिद्ध और गीदड़ का रंग-मंच पर आना संभव नहीं है इसलिए इसे छोड़ा जा सकता है।

मां आहों से नहीं पिघलता वज्र हृदय हिंसा का
तेरे दृग-जल से न बुझेगी यह ज्वाला विकराला !
रण चिताओं की उड़-उड़कर पूछ रही सुरपुर से
'कहां भगीरथ-सा जन जीवन-गंगा लानेवाला ?
मां तेरे आंगन में जलती महानाश की ज्वाला !

(गाते गाते यह इतनी तन्मय इतनी आत्म-विभोर हो उठती है कि सुधबुध खो जाती है। सुननेवालों के हृदय वेदना और महानाश के भय से और भी धुक धुक करने लगते हैं। इसी समय रंग-मंच पर एक दूसरी नारी प्रवेश करती है यह संघमित्रा है। अभी युवती है। उसने सैनिक का परिधान पहना है। जूड़ा कसकर बांधने से उसके मुख की मुद्रा कसी हुई कमान की तरह हो गई है। कमर में फेंटा कसे वह किसी ओर से कम नहीं दिखाई देती पर इस समय वह उद्विग्न है। गाते हो यह करुण स्वर में पुकारती है।)

संघमित्रा रेवा ! रेवा !!

(गायिका सहसा कांप उठती है)

रेवा कौन ! (देखकर) देवी ! (झुककर) मैं देवी को प्रणाम करती हूं।

संघमित्रा हुआ रेवा ! पर तुम यह क्या कह रही हो ? अपनी प्रफुल्लित वाणी को यन्त्रणा की टीसों से क्यों भरे द रही हो। महानाश करने के लिए शस्त्र ही क्या कम हैं जो तुम संगीत को चेतना को भी उसकी दासी बनाये दे रही हो।

रेवा देवो ! महानाश की इस वेला में केवल यातना ही प्रमन्नता

से नाच रहा है केवल गिद्ध और गीदड़ ही आनंद का संगीत अलाप रहे हैं। शेष सब मरण की दानवी लीला है। नीचे धरती पर लाख-लाख भाग्यहीन नारियों के नेत्रों से बहनेवाली वेदना में असंख्य मानवों के क्षत-विक्षत शव तरते हैं। ऊपर आकाश में उनकी प्रेतात्माएं, स्वर्ग में स्थान कम पड़ जाने के कारण सूर्य का प्रकाश ही नहीं रोकतीं बल्कि फिर से अपने शवों पर आक्रमण कर रही हैं और इस बीभत्स लीला को मनुष्य कहता है विजय! सभ्यता और संस्कृति की विजय! (मुड़कर) देवी! क्या आप ऐसी परिस्थिति में संगीत से आहों की अग्नि के अतिरिक्त प्रेम की शीतलता की आशा करती हैं? मृत्यु के अतिरिक्त जीवन का संदेश सुनना चाहती हैं?

मित्रा (पास आकर उसके कंधे को थपथपाती है) शांत रेखा शांत! जो कुछ है वह मैं भी देख रही हूं। मनुष्य आज पागल हो गया है लेकिन वह इतना अधिक पागल हो गया है कि इस महानाश के सूत्रधार स्वयं सम्राट् उद्विग्न हो उठे हैं। उन्हें शंका होने लगी है कि यह कलिंग की पराजय है या उनकी हार। यह क्रांति का रक्त है अथवा महानाश का शोणित।

रेखा (चकित-सी) देवी!

सर्वमित्रा मैं ठीक कह रही हूं रेखा! सम्राट् को शंका होने लगी है।

रेखा (चकित-सी) सम्राट को शंका होने लगी है?

संघमित्रा ऐसा ही जान पड़ता है रेवा! पिछले चार-पांच दिनों से उनके स्वभाव में मैं एक अद्भुत परिवर्तन देख रही हूं। जब-जब वह रणभूमि या बंदीगृह से लौटते हैं तब-तब ऐसा लगता है कि जैसे उनके प्राण झुलस रहे हैं।

रेवा देवी! यह तो मैंने भी अनुभव किया है (गंभीर स्वर) इधर मधुर मादक संगीत सुनते-सुनते वह चौंक पड़ते हैं। अपने हाथों को उलट-पलटकर देखने लगते हैं।

संघमित्रा यही रेवा यही शंका का जन्म है। रक्त-प्लावित युद्धभूमि और जीवित मानवों की कराहों से गुजरते हुए बंदीगृह से लौटकर जब वह तुम्हारी तापहारी मधुर वाणी सुनते हैं तो उन्हें विश्वास नहीं आता कि इस नरक में यह सुर कहां से आ गया।

रेवा (सोचती हुई) देवी की आंखें बहुत दूर तक देख लेती हैं।

संघमित्रा (मुसकराती हुई) अच्छा रेवा! आज क्या तुम सम्राट् के पास नहीं गई?

रेवा नहीं देवी! सुना है कि वह आज किसी गंभीर मंत्रणा में लगे हुए हैं।

संघमित्रा समझी! कलिंग के राजकुमार अभी नहीं पकड़े गये हैं। उन्हीं की चिंता है।

रेवा देवी! अब तो लोगों में भागने की शक्ति भी नहीं देखे। कुमार न जाने कहां जा छिपे हैं? सुना है कि कल उन्होंने अद्भुत पराक्रम दिखाया था। उनकी हाथी-सेना को मार से मगध सेना त्राहि त्राहि कर उठी थी।

संघमित्रा (खोई-खोई) हाँ रेवा ! देखा तो मैंने भी था पर उससे क्या । युद्ध अब भी हो रहा है । वह देखो आकाश में गिद्ध कैसे मंडरा रहे हैं ? दूर वह प्रकाश भी तेज हो चला है । अंधेरे को दूर करने के लिए किसीने फिर आग जलाई है । (निश्वास) संसार समाप्त हो जायगा पर यह युद्ध समाप्त नहीं होगा ।

रेवा सच देवी ! यह युद्ध समाप्त नहीं होगा । मनुष्य की दानवी लिप्सा उसे समाप्त नहीं होने देगी । परन्तु देवी ! मरने के लिए मनुष्य इतने प्रयत्न करता है, जीने के लिए भी कुछ करे, तो क्या संसार का कुछ अहित होगा ?

संघमित्रा (मुस्कराती है) रेवा तुम गाती ही नहीं सोचती भी हो । पर कुछ गलत सोचती हो । ये सारे प्रयत्न मनुष्य जीने के लिए ही तो करता है । हाँ यह दूसरी बात है कि वह यह सब अपने जीने के लिए करता है । तुम जिस कल्याण की बात कहती हो वह तभी होगा जब मनुष्य दूसरों के लिए जियेगा (एकदम) पर पर⋯ वह कौन है ?

(संघमित्रा एक ओर संकेत करती है रेवा भी उधर ही देखती है ।)

रेवा कौन ! ओह यह तो महामात्य हैं ।

संघमित्रा : महामात्य राधागुप्त ! वे कितनी शीघ्रता से सम्राट् के शिविर की ओर आ रहे हैं अवश्य कोई बात है । वह सुनो ! वह जय-घोष भी उठ रहा है ।

(दूर जय-घोष उठता है । उठता रहता है ।)

स्वरघोष मगध-सम्राट् की जय ! सम्राट अशोक की जय !

रेवा शायद कुमार पकड़ लिये गए हैं ।

संघमित्रा (सहसा कांपकर) कुमार पकड़ लिये गए हैं ? क्या सब कुमार पकड़ लिये गये ? चलो रेवा ! चलो । महा अमात्य से पूछें कि क्या सब कुमार पकड़ लिये गए हैं ? (बोलती-बोलती इतनी शीघ्रता से रंगमंच से बाहर जाती है कि रेवा चकित रह जाती है और उसे पुकारती हुई पीछे-पीछे दौड़ती है ।)

रेवा देवि देवि (सहसा रुक जाती है) कुमार के पकड़े जाने की बात सुनकर देवी संघमित्रा कितनी उल्लसित हो उठी हैं । शत्रु हो जाने पर भी कुमार के प्रति उनका प्रेम कम नहीं हुआ है । (निःश्वास) प्रेम भी कितना अद्भुत कितनी पवित्र भावना है । सब लोग प्रेम ही क्यों नहीं करने लगते (एकदम देखकर) ओह ! कुमारी चली भागी जा रही हैं ? चलूं मैं भी देखूं

(वह भी जाती है और क्षणिक सन्नाटे के बाद लघुयवनिका गिर जाती है)

रंगमंच पर प्रस्तुत करते हुए समय की कमी हो तो 'प्रासंगिक' को छोड़ा जा सकता है ।

पहला अंक

(सम्राट् अशोक अपने शिविर में इधर-उधर घूम रहे हैं। वहां की सजावट में राजसी वैभव की पूरी छाप है। भूमि पर बहुमूल्य कालीन और मसनद बिछे हैं। यथास्थान मखमली आवरण से वेष्ठित तोयक भी रखे हैं। एक ओर सम्राट् के बैठने का ऊंचा आसन है। इधर-उधर धूपदान रखे हैं, जिनसे उठकर सुगंधित धूम्र वातावरण को किंचित धूमिल बना रहा है। द्वार के पास और पीछे की ओर अनेक मुखवाले पतीस सोत रखे हैं जिनमें दीपक जल रहे हैं। पृष्ठभूमि में सांध्यगीत की ध्वनि उठती है। वहां कोई नहीं है। परदा उठने पर सम्राट घूमते दिखाई देते हैं। वह कुछ उद्विग्न हैं। वह सुन्दर नहीं हैं, परंतु उनका व्यक्तित्व प्रभावशाली है, विशाल वक्षस्थल आजानुबाहु, प्रशस्त ललाट और बड़े-बड़े नेत्र, सब विश्वास से भरनेवाले हैं परंतु इस समय वह बहुत उद्विग्न हैं। उनके रत्नजटित आभूषण, चमकते रेशमी उत्तरीय सब उनकी वीनता को गहरा करते हैं। वह कुछ बोल रहे हैं। सहसा कहीं आहट होती है वह चौंक पड़ते हैं।)

अशोक (चौंककर) कौन? (कोई उत्तर नहीं) कोई नहीं,

कोई तो था ! (देखकर) मोह छाया थी मेरी छाया में समझा कोई सैनिक है

(स्वर अस्फुट होते हैं। एक दीर्घ निश्वास लेकर वह फिर बोलते हैं।)

सब समाप्त हो गया। सब कलिंग का दर्प चूर हो गया एक लाख आदमी मर गये ठीक हुआ ठीक हुआ न युद्ध में आदमी मरते ही हैं

(उसी समय राधागुप्त शीघ्रता से प्रवेश करते हैं और झुककर अभिवादन करते हैं।)

राधागुप्त सम्राट् की जय हो ! कलिंग के राजकुमार बन्दी हो चुके हैं।

अशोक (चौंककर) *कलिंग के राजकुमार बन्दी हो चुके हैं ?*

राधागुप्त हाँ सम्राट् !

अशोक सच कहते हो महामात्य ?

राधागुप्त आज्ञा हो तो राजकुमार को सम्राट् के चरणों में उपस्थित किया जाय।

अशोक (अनमना-सा) अभी ठहरो। पहले मुझे यह बताओ कि क्या अब युद्ध की आवश्यकता नहीं रही ?

राधागुप्त हाँ देव कलिंग विजय पूर्ण हुई।

अशोक (उसी तरह) हाँ देव कलिंग-विजय पूर्ण हुई। युद्ध समाप्त हो गया। अब शस्त्रों की झंकार सुनने को नहीं मिलेगी। अब आहतों की चीत्कार बंद हो जायगी।

राधागुप्त देव ! अब कलिंग में कौन बचा है जो शस्त्रों को

भ्रकार सुनेगा । जो वृद्ध वनिताएं या बालक वहां शेप हैं वे न सुन सकते हैं और न बोल सकते हैं । वे केवल अपलक दृष्टि से शून्य में ताकते रहते हैं । उनसे बातें करने पर वे कुछ इस प्रकार देखते हैं कि बोलनेवाला स्वयं पानी-पानी हो जाता है । हां वहां केवल एक व्यक्ति है जो देखता भी है और बोलता भी है ।

अशोक वह क्या बोलता है ?

राधागुप्त यह तो मैं नहीं बता सकूंगा देव !

अशोक (सहसा तेज होकर) महामात्य ! जानते हो तुम किस से बात कर रहे हो ?

राधागुप्त जानता हूं भारत सम्राट् !

अशोक सच !

राधागुप्त सम्राट् चाहें तो वह बात स्वयं उसीके मुंह से सुन सकते हैं ।

अशोक तो तुम उस वाचाल को पकड़ लाये हो ?

राधागुप्त मैंने अभी निवेदन किया था देव ! कलिंग के राजकुमार बंदी हो चुके हैं ।

अशोक कलिंग का राजकुमार ! कुमार बंदी होकर भी बोलना जानते हैं ?

राधागुप्त तबसे वह कुछ अधिक बोलने लगे हैं सम्राट् !

अशोक (होंठ दबाकर) वह शायद भारत-सम्राट् चण्डाशोक के स्वभाव को नहीं जानते ।

राधागुप्त देव ! कुमार मगध में हमारे अतिथि रहे हैं । सम्राट

उनकी वीरता से परिचित हैं। आखेट के समय उनके हस्त लाघव की सम्राट् ने भूरि भूरि प्रशंसा की थी और देवी संघमित्रा

अशोक (जोर-से) महामात्य !

राधागुप्त अपराध क्षमा हो देव। देवी संघमित्रा आज भी कुमार की प्रशंसक हैं। अभी-अभी उनके बंदी हो जाने का समाचार सुनकर उन्होंने कहा था

अशोक (चौंका-सा) क्या कहा था ?

राधागुप्त उन्होंने कहा था कि कुमार के साथ वही व्यवहार होना चाहिए जो एक वीर पुरुष के साथ होता है।

अशोक (झल्लाकर) महामात्य ! हमें देवी संघमित्रा के परामर्श की आवश्यकता नहीं है। हम जानते हैं कि हमें अब क्या करना होगा। कुमार हमारा शत्रु है और संघमित्रा जानती है कि शत्रु के साथ कैसा व्यवहार किया जाता है। तुम बंदी को उपस्थित करो हम उसकी बातें सुनेंगे।

राधागुप्त जो आज्ञा देव।

(राधागुप्त का गमन और रणवेश में संघमित्रा का प्रवेश)

संघमित्रा भैया !

अशोक कौन संघमित्रा ! तुम इस समय यहाँ क्या आई ?

संघमित्रा सम्राट् से निवेदन करने कि गायिका आ गई है। आज्ञा हो तो उपस्थित करूँ।

अशोक इस समय नहीं संघमित्रा ! मुझे कुछ आवश्यक काम है।

संघमित्रा क्या मैं जान सकती हूँ कि सम्राट को इस संध्याकाल में क्या काम है ?

अशोक तुम काम जानना चाहती हो। (एकदम)...नहीं संघमित्रा मैं तुम्हें कुछ नहीं बता सकूँगा।

संघमित्रा (हँसकर) बताने की कोई आवश्यकता नहीं सम्राट्! मैं जानती हूँ

अशोक तुम क्या जानती हो ?

संघमित्रा यही कि आप कलिंग-कुमार के भाग्य का निर्णय करने जा रहे हैं। मैं आपसे केवल इतना निवेदन करूंगी कि आज आपके शौर्य की परीक्षा है।

अशोक भारत-सम्राट् का शौर्य विश्व विदित है। कुमार को मेरे चरणों में सिर झुकाना ही होगा।

संघमित्रा और न झुकाया तो ?

अशोक तो यह तलवार उसे झुका लेगी।

(तलवार को म्यान में बजाता है।)

संघमित्रा (कांपकर) भैया!

अशोक (हँसकर) कांप गई! क्या तुम्हें शस्त्रों से डर लगने लगा है ?

संघमित्रा नहीं मैं शस्त्रों से नहीं डरती सम्राट्!

अशोक तो कुमार की मृत्यु से डरती हो ?

संघमित्रा नहीं सम्राट मुझे उसकी चिंता नहीं है ?

अशोक तो फिर किस बात की चिंता है ?

संघमित्रा मुझे सम्राट् की चिंता है। गलती से यह तलवार को

शौर्य का प्रतीक समझ बैठे हैं।

अशोक तलवार नहीं तो शौर्य का प्रतीक और क्या है?

संघमित्रा हृदय! हृदय की विशालता और उदारता का नाम शौर्य है सम्राट्।

अशोक हृदय की विशालता और उदारता (सहसा अट्टहास) हृदय की विशालता और उदारता! जान पड़ता है कि कलिंग में उस भिक्षु का प्रभाव तुमपर भी पड़ा है संघमित्रा! आखिर तुम नारी हो और नारी की अवरोध शक्ति बड़ी दुर्बल होती है। लेकिन याद रखो अशोक बौद्धों की इस दुर्बल नीति के बल पर भारत का सम्राट् नहीं बना है।

संघमित्रा लेकिन सम्राट्

(किसीके आने का स्वर)

अशोक (शीघ्रता से) तुम पथ का सकती हो संघमित्रा।

संघमित्रा क्या!

अशोक जाओ संघमित्रा! भारत-सम्राट् अशोक तुम्हें जाने की आज्ञा देता है।

संघमित्रा (जाती हुई) जा रही हूँ सम्राट्। पर भूलिये नहीं कि हृदय की विशालता का नाम ही शौर्य है।

(जाती है)

अशोक (स्वगत) हृदय की विशालता का नाम शौर्य है। संघमित्रा! मैं जानता हूँ कि तुम क्या कहना चाहती हो? तुम कलिंग के युवराज से प्रेम करती हो। तुम मुझे धोखा

नहीं दे सकतीं पर युवराज मेरा शत्रु है और तुम मेरी बहन !

(राधागुप्त का कलिंग-कुमार के साथ प्रवेश । कुमार बानों सैनिकों के बीच में है । मबर आते ही वह कुछ हटकर खड़े हो जाते हैं । कुमार रणवेश में हैं । प्रशस्त ललाट, उन्नत वक्षस्थल, किंचित श्यामल वर्ण, दुर्दम्य विश्वास से पूर्ण नयन और आजानुबाहु, एक साथ रक्षा और दंड के प्रतीक । उन्हें देखकर आँखें पसार भारना भूल जाती है ।)

राधागुप्त सम्राट् की जय हो । कलिंग के राजकुमार उपस्थित हैं ।

अशोक (कठोर स्वर में) महामात्य कलिंग का अब कोई राजकुमार नहीं है । यह एक साधारण बंदी है ।

कुमार अशोक ! अपनी वास्तविक अवस्था में सभी साधारण होते हैं । तुम भी अशोक पहले हो सम्राट पीछे ।

अशोक (कड़ककर) बंदी तुम जानते हो तुम किससे बातें कर रहे हो ?

कुमार जानता क्यों नहीं । मैं मगध के हत्यारे सम्राट् चंडाशोक से बातें कर रहा हूँ उस चंडाशोक से जिसने मां वसुंधरा को अपने लाखों पुत्रों का रक्त पीने के लिए विवश किया है ।

अशोक (क्रुद्ध) बंदी कलिंग के लोगों की तरह तुम वाचाल ही नहीं धृष्ट भी हो । इस असभ्यता का एक ही प्रतिकार

मेरे पास है और वह है कटार।

(कटार दिखाता है)

कुमार हत्यारे के पास कटार के अतिरिक्त और भी कुछ होता है क्या?

अशोक नहीं! मैं अभी तुम्हारा सिर काट सकता हूं।

कुमार जो धरती माता अपने लाखों पुत्रों का रक्त पी चुकी है, वह अपने एक और पुत्र का रक्त पीयेगी तो कोई अंतर नहीं पड़ेगा।

राधागुप्त धृष्टता की भी एक सीमा होती है कुमार! होश में आकर बातें करो।

कुमार तुम्हें भी क्रोध आ गया महामात्य! आखिर हो तो विष्णुगुप्त चाणक्य के शिष्य। लेकिन सुनलो राधागुप्त तुम्हारे इस हत्यारे सम्राट् को एक दिन इस रक्त-प्लावन का बदला चुकाना होगा। उसका अपना हृदय उसकी भर्त्सना करेगा।

अशोक (अट्टहास) यही उपगुप्त का स्वर यही बौद्ध-भिक्षु की वाणी। बौद्धों की कुत्सित नीति के कारण ही तुम्हारा पतन हुआ है बंदी!

कुमार मेरा पतन नहीं हुआ अशोक! पतन तुम्हारा हुआ है।

अशोक मेरा पतन! भारत सम्राट् का पतन! असंभव! कैसे असंभव—

कुमार असंभव नहीं अशोक! वह पूरी तरह संभव हो चुका है। लाखों मानवों का रक्त तुम्हारे पतन की घोषणा

कर रहा है। लाखों घायलों की कराह में तुम्हारे पतन का स्वर गूंज रहा है। समग्रामों की सूनी मार्गों में माताओं की खाली गोदियों में शिशुओं की निरीह दृष्टि में सब कहीं तुम्हारे पतन की कहानी अंकित है। कलिंग के उजड़े हुए ग्राम वीरान प्रदेश ये सब तुम्हारे पतन के साक्षी हैं। अशोक तुम जीतकर हार गये हो कलिंग मिटकर अमर हो गया।

अशोक अशोक हार गया है कलिंग अमर हो गया है।

(अट्टहास)

हँस लो जितना हँस सको हँस लो। मगर कलिंग में तुम्हें यह हँसी नहीं मिलेगी। वहां के मार्ग रक्त से रंगे पड़े हैं। वहां सिंहासन के चारों ओर लाशों के ढेर लगे हुए हैं। वहां बंदीघरों से उठती हुई बंदियों की कराह ने सारे वातावरण को विषाक्त बना दिया है। अशोक तुमने कलिंग की धरती को जीता है आत्मा को नहीं। धरती की जीत को तुम जीत कहते हो?

कुमार

राधागुप्त जीत नहीं तो और क्या है। आत्मा को किसने देखा है। शरीर सत्य है उसीकी जय सच्ची जय है।

कुमार तुम्हारे इस शब्द-जाल से तुम्हारी पराजय जय में नहीं पलट सकती।

कुमार मेरी पराजय। मुझे किसने पराजित किया है?

राधागुप्त भारत-सम्राट् महाराज अशोक ने।

कुमार राधागुप्त। जिस कलिंग को सोलह राज्यों को उखाड़

फेंकनेवाला तुम्हारा गुरु चाणक्य पराजित नहीं कर सका जिसने सदा तुम्हारी सत्ता को चुनौती दी है उसे कोई भी कभी भी पराजित नहीं कर सकता। चन्द्रगुप्त ! कलिंग के राजकुमार के शरीर में जब तक प्राण हैं तबतक उसे कोई पराजित नहीं कर सकता।

अशोक (तेजी से) बंदी ! तुम मुझे प्रणाम नहीं करोगे ?

कुमार कलिंग का राजकुमार कलिंग के प्रतिरिक्त और किसी सिंहासन के सामने झुकना नहीं जानता।

अशोक लेकिन कलिंग का सिंहासन धूल में मिल चुका है। कलिंग का स्वामी मैं हूं।

(राधागुप्त भी आवेश में आता है।)

कुमार कलिंग के युवराज के रहते कलिंग का स्वामी कोई नहीं हो सकता अशोक।

अशोक होने का प्रश्न नहीं है। कलिंग का राजमुकुट मेरी ठोकरों में लोट रहा है।

कुमार ठोकर लगाना तो दूर की बात है उसकी ओर दृष्टि उठानेवाले की आंखें निकाल ली जाती हैं अशोक।

राधागुप्त बस करो बंदी नहीं तो

कुमार नहीं तो तुम्हारा सिर काट लिया जायगा। (अट्टहास) तुम लोगों में सिर काट लेने से अधिक युद्ध करने की शक्ति है ही कहां ? तुम कायर हो। और कायर कभी किसीको पराजित नहीं कर सकते।

अशोक महामात्य ! बंदी से कहो कि वह व्यर्थ का वितंडावाद

(संघमित्रा का प्रवेश)

संघमित्रा सम्राट् का जय हो !

अशोक (चौंककर) कौन ?

संघमित्रा मैं।

अशोक संघमित्रा।

संघमित्रा हाँ सम्राट् ! कुमार के भाग्य का निर्णय कर चुके ?

अशोक (समझकर) तुम उस बंदी की बात कर रही हो ? अच्छा हुआ संघमित्रा जो तुम्हारा विवाह उसके साथ नहीं हुआ। कलिंग के लोग बड़े धृष्ट होते हैं। मैं उसे क्षमा करने को तैयार था परन्तु वह किसी भी प्रकार मेरी अधीनता स्वीकार करने को तैयार नहीं हुआ।

संघमित्रा अधीनता स्वीकार करने को उसके पास रखा ही क्या है ? सारा देश श्मशान बन चुका है। वह उर्वर भूमि अपने हर्षोत्फुल्ल निवासियों के शवों से भरी पड़ी है। उसके मार्गों पर हृष्ट-पुष्ट और बहुमूल्य हाथियों के अंग-अंग बिखरे पड़े हैं। कलिंग के वे सुंदर वस्त्र जिनको आप और हम सब चाव से मंगाकर पहना करते थे चीर चीर होकर हवा में उड़ रहे हैं। उफ् कितने लोग थे कलिंग में ! मार्ग नहीं मिलता था पर अब

अशोक : (एकदम चौंककर) तुम उसका देश देखने गई थीं संघमित्रा !

संघमित्रा जाना ही पड़ता है। जिस समय आपके शूरवीर सैनिक घरों से निकाल-निकालकर उन भोले सरल और

निरपराध कलिंग-निवासियों का वध करते हैं तो सम्राट
महामात्य का माथा भी शर्म से झुक जाता है!

अशोक यह युद्ध है संघमित्रा। और युद्ध में विरोधी का नाश
ही किया जाता है।

संघमित्रा जानती हूँ सम्राट्। मैं विरोध नहीं करती। केवल
सम्राट् के सैनिकों के कर्म का बखान करती हूँ।

अशोक वे ठीक करते हैं। उन्हें यही आज्ञा है।

संघमित्रा सम्राट् के सैनिक आज्ञाकारी हैं, यहाँ तक कि छोटे
छोटे बच्चों और औरतों को भी वे घर में नहीं छोड़ते।
उन्हें बाहर निकालकर घरों में आग लगा देते हैं।
इसलिए कुमार ने गलती की जो इनसान के लिए सिर
दिया।

अशोक तो तुम जानती हो कि मैंने बंदी का सिर काट लेने
की आज्ञा दी है?

संघमित्रा जानती तो नहीं पर कल्पना कर सकती हूँ। बच
पन से आपको पहचानती हूँ। राजगद्दी भी तो आपने बड़े
भैया सुसीम के सिर का सौदा करके जीती है। औरों की
भाँति विरासत में नहीं पाई। विरासत एक प्रकार का
दान है और दान लेना वीरता का अपमान है!

अशोक (दहाड़कर) गद्दी की तो यहाँ कोई चर्चा ही नहीं
था संघमित्रा!

संघमित्रा यही तो गौरव है भैया। चर्चा आपक
है। कुमार को प्राणदंड देकर आपने राज्य

अपने स्वभाव की मर्यादा की भी रक्षा की है।

अशोक (तेज स्वर) स्वभाव की मर्यादा! संघमित्रा, अशोक शक्ति में विश्वास रखता है। दया और करुणा को वह साम्राज्य का शत्रु मानता है। सुसीम पिता के राज्यकाल में भी तक्षशिला का विद्रोह नहीं शांत कर सका था। वह बौद्धों की दुर्बल नीति का पक्षपाती था। वह मानवता की पुकार-जैसी काल्पनिक भावनाओं में विश्वास करता था।

संघमित्रा निःसंदेह बड़े भैया सम्राट् होने के लिए नहीं थे। वह गद्दी पर बैठते तो मौर्यों की राज्य-पताका कैसे चारों दिशाओं में फहराती? देश कैसे विजित होते? धरती माता कैसे अपनी संतान का रक्त पीती? अशोक कैसे मानव-चीत्कार का संगीत सुनता?

अशोक तुम जानती हो कि चीत्कार में भी संगीत होता है।

संघमित्रा होता है, सम्राट्! उसको सुनकर तो मनुष्य जीवन से डरना सीखता है।

अशोक (हँसकर) शब्दों का मायाजाल! वही शब्दों का मायाजाल। संघमित्रा जो जीवन से डरेगा वह जियेगा कैसे?

संघमित्रा जैसे सम्राट् जीते हैं, जैसे सम्राट् के सैनिक जीते हैं।

अशोक जैसे सम्राट् जीते हैं? यानी जैसे मैं जीता हूँ?

संघमित्रा हाँ सम्राट्।

अशोक संघमित्रा ! तुम भी उन बौद्धों से हेल-मेल बढ़ाने लगी हो । तभी यह रहस्यमयी भाषा बोलती हो । बंदी भी कुछ इसी प्रकार कहता था ।

संघमित्रा बंदी क्या कहता था सम्राट् ?

अशोक वह कहता था कि तुम ऐसे वीर हो जो एक बंदी का सिर भी नहीं झुका सके । खोपड़ियां ठुकराने के लिए तो अनेक मोम्ड श्मशान में घूमा करते हैं (खोखली हंसी) यह सब बकवास है । मुझबल ही सबसे बड़ा शौर्य है । हृदय और आत्मा की बातें नारी और भिक्षुओं के लिए हैं ।

संघमित्रा (हंसकर) धन्यवाद भैया ! नारी को आपने भिक्षुओं के समकक्ष माना लेकिन एक बात पूछूं सम्राट् !

अशोक पूछो संघमित्रा ! (निश्वास) बात पूछने को तो आज मेरा भी मन करता है ।

संघमित्रा आपका मन बात पूछने को करता है ?

अशोक करता तो है --

संघमित्रा तो फिर पूछिये न । मैं तो सदा आपको तंग करती रहती हूं । आप क्या पूछना चाहते हैं सम्राट ?

अशोक कुछ नहीं संघमित्रा । कुछ नहीं तुम पूछो ।

संघमित्रा (जोर देकर) आप ही पूछिये सम्राट् !

अशोक संघमित्रा !

संघमित्रा आप कुछ पूछना चाहते हैं सम्राट् । पूछिये—

अशोक पूछूं ?

संघमित्रा अगर मुझे किसी योग्य समझते हो तो पूछो।

अशोक नहीं यह बात नहीं है संघमित्रा। मैं तुमसे एक बात पूछना चाहता हूं। मैं पूछना चाहता हूं कि क्या किसीका वध करने की कोई और रीति भी होती है?

संघमित्रा समझी नहीं सम्राट्। और रीति से आपका क्या आशय है?

अशोक जिसका वध करना हो उसके प्राण न निकलें पर वह मर जाए।

संघमित्रा : ऐसी रीति! नहीं भैया मैं तो ऐसी रीति नहीं जानती। शस्त्र बांधनेवाला कोई जानता भी न होगा।

अशोक अच्छा तो जाने दो लेकिन हां संघमित्रा! शस्त्र बांधनेवाला कायर होता है क्या?

संघमित्रा नहीं तो आपको अचानक यह क्या होने लगा? आप ऐसे प्रश्न क्यों पूछते हैं?

अशोक (कांपकर) न जाने न जाने (दृढ़ होकर) नहीं, नहीं मुझे कुछ नहीं हुआ। ऐसे ही कुछ याद आ गया था। कोई बात नहीं है। बात यह है कि अब हम शीघ्र सिंहल-विजय के लिए चलेंगे।

संघमित्रा सच?

अशोक हां।

संघमित्रा मैं भी चलूंगी।

अशोक अवश्य चलना। वह बहुत सुंदर देश है।

संघमित्रा और हम सौंदर्य के उपासक हैं, उसे चाट जाने-

बाले (हँसकर) अच्छा मैं रेवा को बुला लाऊं। आप थक गये होंगे ?

अशोक नहीं नहीं संघमित्रा ! मैं गाना सुनना नहीं चाहता। मैं अब कभी गाना नहीं सुनूंगा।

संघमित्रा (सहसा रुककर) आप अब गाना नहीं सुनेंगे ? क्यों ? क्या हुआ ?

अशोक कुछ नहीं संघमित्रा ! हुआ तो कुछ नहीं लेकिन··· लेकिन ।

संघमित्रा लेकिन क्या

अशोक संघमित्रा ! जब रेवा गाती है तो न जाने क्यों मुझे युद्ध-भूमि का दृश्य दिखाई देने लगता है। मैं तब उसके मादक संगीत में घायलों का चीत्कार सुनने लगता हूं। मेरे कानों में उस समय बंदियों की करुण पुकार गूंज उठती है। (उत्तेजित हो जाता है) संघमित्रा· संघमित्रा ! युद्ध में इतने आदमी मरते क्यों हैं ? युद्ध होते क्यों हैं ?

संघमित्रा भैया ! भया ! यह आपको क्या हो गया है ? आप अस्वस्थ हैं। आपका मन दुखी है। आपको संगीत की आवश्यकता है। मैं अभी रेवा को भेजती हूं।

(संघमित्रा का शीघ्रता से गमन।)

अशोक (उसी तरह खमरका-सा) क्यों इतने आदमी मरते हैं ? क्यों इतना रक्त बहता है संघमित्रा ! कभी कहता था कि मैंने धरती माता को उसके अपने बेटों का रक्त पीने का विवश किया है। अपने बेटों का रक्त ! कोई अपने बेटे

बंदियों की करुण पुकार से उठता है। लेकिन महामात्य मैं तुमसे पूछ रहा था कि क्या मैं बंदी का सिर नहीं झुका सकता? क्या उसका सिर काटना ही होगा?

राधागुप्त जो भारत-सम्राट् की आज्ञा नहीं मानता उसका सिर काटा ही जाता है।

अशोक लेकिन महामात्य! आज्ञा तो वह फिर भी नहीं मानेगा।

राधागुप्त सम्राट्! यदि वह आज्ञा मान लेता तो उसे दंड दिया ही क्यों जाता?

अशोक दंड 'दंड' यही तो संघमित्रा कहती थी कि तलवार में शौर्य नहीं होता वह हृदय में होता है। क्यों महामात्य! तुम हृदय की शक्ति को जानते हो?

राधागुप्त हृदय की शक्ति को नहीं जानता देव! मैं शासन की शक्ति को जानता हूं और जानता हूं संगीत की शक्ति को। मैं अभी उसका प्रबंध करता हूं। (जाता है फिर रुकता है) ओह, मैं भूल गया सम्राट् द्वार पर एक भिक्षु खड़े हैं।

अशोक भिक्षु, मुझसे मिलने आये हैं इस समय?

राधागुप्त सम्राट् वह कलिंग-कुमार से भेंट करना चाहते हैं।

अशोक किसलिए?

राधागुप्त शायद वह कुमार को

अशोक (एकदम) शायद वह कुमार को मेरी अधीनता स्वीकार करने के लिए राजी करना चाहते हैं। (हँसकर) महामात्य जो काम मैं नहीं कर सकता उसे शस्त्र कर

सकते हैं मिटा कर सकते हैं। यह कैसी विडम्बना है? यह कैसी शक्ति है? मैं इतना दुर्बल हूँ फिर भी सम्राट् हूँ। – नहीं नहीं महामात्य! मैं वह शक्ति चाहता हूँ जिसके द्वारा शत्रु का सिर झुका सकूँ। क्या वह शक्ति मुझे मिल सकती है?

(महेंद्र का प्रवेश)

महेंद्र अवश्य मिल सकती है सम्राट्! बात केवल इच्छा की है।

अशोक कौन? महेंद्र!

महेंद्र आज्ञा सम्राट्!

अशोक सम्राट् सम्राट्! महेंद्र तुम भी मुझे सम्राट् कहोगे?

महेंद्र जो आज तक कहता आया हूँ उसको अचानक बदल देने का कोई कारण दिखाई नहीं देता सम्राट्।

अशोक ठीक है महेंद्र। तुम ठीक कहते हो परन्तु तुम नहीं जानते उस बंदी कुमार ने मुझसे कहा था कि सबसे पहले हम सब साधारण पुरुष हैं। मैं अशोक पहले हूँ सम्राट् पीछे।

महेंद्र (हँसकर) और सम्राट् ने उसकी बात मान ली?

अशोक तब तो नहीं मानी थी पर अब मुझे ऐसा लगता है कि बस मुझे कोई अशोक कहकर पुकारे।

महेंद्र (राधागुप्त की ओर मुड़कर) सम्राट् आज कुछ दीन दिखाई दे रहे हैं महामात्य! ऐसा क्यों?

अशोक महामात्य को कुछ पता नहीं। महेंद्र वह मेरी वाणी

है। सच पूछो तो मुझे भी कुछ पता नहीं। मुझे उ
बंदी ने दया का पात्र बना दिया है। मेरा हृदय बस रह
है। मुझे लगता है कि जैसे मैं अकेला हूं, जैसे मैं ए
दुर्बल प्राणी हूं।

महेंद्र भैया यह तुम क्या कह रहे हो?

अशोक (भावावेश) भैया! महेंद्र एक बार फिर कहो तो
'भैया'!

महेंद्र भैया!

(सम्राट् अशोक आंख मूंदते हैं।)

राधागुप्त सम्राट्! भिक्षु के लिए क्या आज्ञा है?

अशोक (सहसा संभलकर) ओह भिक्षु! उन्हें आने दो लेकिन
महामात्य उनके आने से पहले मुझे यह बताओ कि क्या
मैं कुमार के वध पर फिर से विचार कर सकता हूं?

राधागुप्त सम्राट् सब कुछ कर सकते हैं। परंतु उन्हें अपने
पद की मर्यादा को समझ लेना चाहिए।

अशोक क्या कहा मुझे अपने पद की मर्यादा को समझ लेना
चाहिए, महामात्य! मैं सम्राट् हूं किसीका बंदी नहीं।

(उपगुप्त का प्रवेश।)

उपगुप्त जबतक व्यक्ति अपने लिए जीता है तबतक वह
बंदी ही रहता है। आकांक्षा की परिधि सीमित है, परंतु
उसकी प्यास बड़ी भयंकर होती है, महाराज! मकड़ी के
जाल के समान उसमें फंसकर कोई जीवित नहीं रहा है।

अशोक भिक्षु उपगुप्त! मैं आपको प्रणाम करता हूं भंते!

उपगुप्त कल्याण हो ! मैं कलिंग-कुमार से मिलना चाहता हूं।

अशोक महामात्य ने मुझे अभी बतलाया था, लेकिन मुझे लगता है कि कुमार से अधिक मुझे आपकी मंत्रणा की आवश्यकता है।

उपगुप्त आपको मेरी मंत्रणा की आवश्यकता है ?

अशोक हां भंते !

उपगुप्त पूछो क्या जानना चाहते हो ?

अशोक भंते ! क्या कोई ऐसी शक्ति है जो बिना नाश किये विरोधी को पराजित कर सके।

उपगुप्त किसीको पराजित करने की भावना ही मनुष्य की सबसे बड़ी दुर्बलता है महाराज।

अशोक (दोहराता हुआ) किसीको पराजित करने की भावना ही मनुष्य की सबसे बड़ी दुर्बलता है। किसीको पराजित करने की भावना ही मनुष्य की सबसे बड़ी दुर्बलता है।

(कई बार दोहराता है।)

उपगुप्त सम्राट् रात बीत रही है। क्या मैं --।

अशोक (एकदम) रात बीत रही है। सच क्या रात बीत रही है ? भंते ! आपने कितनी सुन्दर बात कही है। रात बीतती है तभी प्रभात होता है।

उपगुप्त लेकिन आज का प्रभात किसी की मृत्यु का संदेश लेकर आ रहा है सम्राट्।

अशोक आप कलिंग के युवराज की बात कर रहे हैं भंते। वह

जाती हो मन उतना ही विरस होता है। (निश्वास) न जाने यह युद्ध कब समाप्त होगा ? मरे हुए लोगों की संख्या गिनते-गिनते ऐसा लगने लगा है कि जैसे हम सब मरे हुए हैं क्योंकि उनके सामने जो जीते हैं उनकी तो कोई गिनती ही नहीं है।

रेवा (मुस्कराकर) महारानी ! सुना है कि जब प्रत्येक नया व्यक्ति इस लोक में आता है तो विधाता उसे मृत्यु का दंड सुनाकर भेजते हैं।

कारुवाकी *(हँसकर) ओह यह बात है। तभी तो इसे मृत्यु* लोक कहते हैं। मैं आज महाराज को धन्यवाद दूंगी कि वह इतने आदमियों का वध करवाकर विधाता का काम हल्का कर रहे हैं। *(सहसा हँसी विषाद में बदल जाती है)* पर पर रेवा मुझे तो लगता है

(उठकर खड़ी हो जाती है और वातायन से बाहर झांकती है)

रेवा आपको क्या लगता है, महारानी !

(वह भी उठती है)

कारुवाकी यही कि विधाता का काम मनुष्य को नहीं करना चाहिए। युद्ध बंद होना चाहिए।

रेवा कलिंग का युद्ध तो आज समाप्त हो गया महारानी ! युवराज के बंदी हो जाने के बाद कौन बचा है जो अब भेरी-घोष करेगा। जो युद्ध के भोजन बन सकते हैं वे मनुष्य तो सब पहले ही मर चुके हैं।

कारुवाकी ठीक है रेवा परंतु कलिंग-विजय हो जाने से युद्ध बंद होने की कोई आशा नहीं है। अभी सिंहल-विजय शेष है। फिर कलिंग तथा सिंहल के बीच में कितने ही और देश हैं। उनमें कितने ही लाख नर-नारी बसते हैं। उन सबकी हत्या उफ़! विधाता इस संसार को एक बार ही क्यों नहीं नष्ट कर देता।

रेवा (कोई-कोई) हां महारानी! मनुष्य की मनुष्य द्वारा हत्या करवाकर न जाने विधाता को क्या रस आता है।

कारुवाकी (दूर झांकती हुई) मुझे तो कभी-कभी ऐसा लगता है जैसे विधाता है ही नहीं...

(प्रतिहारी का प्रवेश)

प्रतिहारी महारानी की जय हो!

कारुवाकी क्या है?

प्रतिहारी सम्राट् पधारनेवाले हैं महारानी।

कारुवाकी बहुत अच्छा।

(प्रतिहारी लौट जाता है)

कारुवाकी सम्राट् पधार रहे हैं। रेवा तुम बराबर के प्रकोष्ठ में ठहरो। हो सकता है कि तुम्हारी आवश्यकता पड़े। कुछ समय पूर्व उनके शिविर से समाचार मिला था कि वह आज बहुत उद्विग्न हैं। यूं तो वह कई दिन से खिन्न हैं पर आज सुना है कि कलिंग के युवराज ने उन्हें बहुत विचलित कर दिया है।

रेवा जो आज्ञा देवि!

(जाती है। महारानी वातायन से हटकर मंच के द्वार की ओर बढ़ती हैं, तभी दूसरी ओर से सम्राट् अशोक प्रवेश करते हैं। मुख-मुद्रा बहुत प्रसन्न न होकर भी खिन्न नहीं है। पदचाप सुनकर महारानी मुड़ती हैं। मुस्कराती हैं।)

कारुवाकी महाराज की जय हो। पधारिये। आज तो बहुत असमय हो गया है। महाराज का चित्त तो प्रसन्न है?

अशोक (पास आकर) युद्ध में चित्त की प्रसन्नता सापेक्ष होती है देवि! मैं स्वयं नहीं जानता कि मैं प्रसन्न हूँ या खिन्न। विशेषकर जो कुछ मैं अब कर आया हूँ उसने मुझे दुविधा में डाल दिया है।

(शैया पर बैठ जाते हैं, महारानी खड़ी रहती हैं।)

कारुवाकी अब आप क्या कर आये हैं, मैं सुन सकती हूँ? रेवा कह रही थी कि कलिंग के युवराज बंदी हो चुके हैं।

अशोक वही तो। उसीकी तो बात है।

कारुवाकी क्या बात है। उसका पकड़ा जाना तो एक तरह से अच्छा ही हुआ। युद्ध समाप्त हो गया। दस दिन से मरने-जीनेवालों की संख्या सुनते-सुनते जी ऊब उठा था।

अशोक तुम्हारा जी भी ऊब उठा था?

कारुवाकी सभीका ऊब उठा होगा स्वामी! वह बात ही ऐसी थी। शस्त्रों की खटपट असहाय घायलों की करुण पुकार, चिताओं से उठता हुआ आहों का धुआँ उनके

ऊपर मंडराता हुआ घनघोष ! सब कुछ ऐसा लगता था जैसे—

अशोक : उसे रुक क्यों गई देवि ! बताओ वह कैसा लगता था ?

कारुवाकी : जैसे किसी मां के एकलौते पुत्र की शवयात्रा का जुलूस निकल रहा हो।

(कहकर स्वयं कांप उठती है। महाराज के मुख पर कई रंग आते हैं और जाते हैं।)

अशोक : (धीमा स्वर) ठीक कहा हो देवि ! ठीक ऐसा ही मुझे भी लगता था।

बंदी का सिर नहीं झुका सके। खोपड़ियां ठुकराने के लिए तो अनेक गीदड़ श्मशान में घूमा करते हैं। लेकिन वह वीर पुरुषों का मार्ग नहीं है।

कारुवाकी (चकित फुसफुसाती है) एक बंदी का सिर नहीं झुका सके। खोपड़ी ठुकराने के लिए तो अनेक गीदड़ श्मशान में घूमा करते हैं लेकिन वह वीर पुरुषों का मार्ग नहीं है वीर पुरुषों का मार्ग (एकदम) फिर आपने क्या किया ?

अशोक फिर मैंने उसको दिये गए मृत्यु-दण्ड की आज्ञा वापस ले ली।

कारुवाकी (और भी चकित) क्या क्या कहा आपने ?

अशोक : यही कि मैंने मृत्यु-दण्ड की आज्ञा वापस ले ली और उसका राज्य उसे लौटा दिया।

(अचरज से रानी के नेत्र फैल जाते हैं। हतभाग्य-सी वह कभी सम्राट् को, कभी दीपक के कंपित प्रकाश को देखती है। फिर फुसफुसाती है।)

कारुवाकी (जैसे अपने से बोलती है।) मृत्युदण्ड की आज्ञा वापस ले ली। उसका राज्य उसे लौटा दिया। जिस राज्य के लिए लाखों मानवों का रक्त बहा लाखों ललनाओं की सुहाग की लाली पुछी लाखों माताओं की गोदी सूनी हो गई। जिस राज्य के लिए नगर वीरान हो गये भवन खंडहर बन गये पृथ्वी और आकाश अनाथों अपाहिजों अनाहतों की आहों में कांप उठे, वही राज्य आपने

उसे लौटा दिया। इतना बड़ा मरण-स्वीकार मनाकर, इतनी बड़ी दानवी लीला के बाद—

अशोक (अनबूझ-सा एकदम) हाँ हुआ तो यही पर नहीं जानता यह ठीक हुआ या गलत। शायद गलत हुआ। पर न जाने यह सब कैसे हो गया? मुझे स्वयं विश्वास नहीं आता। शायद तुम्हें भी नहीं आ रहा है। बात कुछ ऐसी ही है। मगध का प्रतापी सम्राट्—

कारुवाकी (एकदम) नहीं नहीं सम्राट्। मैं यह नहीं कहती। मैं तो मैं तो केवल यह जानना चाहती थी कि यह सब क्या हो गया?

अशोक (मुस्कराकर) और क्यों हो गया? यह नहीं जानना चाहती देवि ठीक यही प्रश्न मैं अपने से पूछ रहा हूँ कि अशोक तूने यह सब क्यों किया?

कारुवाकी (चकित) क्यों किया?

अशोक (दृढ़ता) क्योंकि मैं कलिंग के युवराज से पराजित होना नहीं चाहता था। क्योंकि मैं उसका सिर झुकाना चाहता था काटना नहीं चाहता था।

कारुवाकी सिर झुकाना चाहते थे काटना नहीं चाहते थे। स्वामी आज कौन-सी भाषा बोल रहे हैं। दस दिन से जो कुछ मैं सुन रही थी वह रक्त और ज्वाला की भाषा थी। आज श्मशान में बसंत-विराग का राग कैसे छिड़ गया?

अशोक देवी का स्मरण समझता हूँ। परन्तु ...

मदृष्या

कांक्षी हूँ। मैं विजय चाहता हूँ किसी भी मूल्य पर विजय। मेरे नाम से गांधार से लेकर केरल तक कामरूप से लेकर सौराष्ट्र तक सारा देश कांपता है। मैंने कलिंग को पराजित करने का निश्चय किया है। उस कलिंग को जिसने शक्तिशाली नंदों की शक्ति को खंड-खंड कर दिया था जिसने मेरे प्रतापी पिता और पितामह के सामने नतमस्तक होने से इकार कर दिया था जिसने सोलह राज्यों को उखाड़ फेंकनेवाले महामति चाणक्य की बुद्धि को चुनौती दी थी उसी कलिंग को मैं मौर्य-साम्राज्य में लय कर देना चाहता हूँ। उसके पराभव के बिना मौर्य साम्राज्य का एकीकरण असम्भव था। इसी बात के लिए मैंने उसके वैभव को धूल में मिला दिया। उसके शरीर को खंड-खंड कर डाला पर—(निश्वास)

कारुवाकी पर क्या स्वामी !

अशोक पर मैं उसे अपना नहीं बना सका। मेरे हृदय में ऐसी ज्वाला घुमड़ रही है जो जय-जयकार का ᴗ करती हुई मानो मुझसे कहती है—अशोक जो युद्ध किया है एक दिन उसके लिए तुम खून के आंसू ब। तुम्हारी आत्मा तुम्हें धिक्कारेगी (एकदम) नहीं यह स्थिति नहीं चाहता। मैं उसे अपना ।न। च। मैं गीदड़ बनकर श्मशान में खोपड़ी नहीं ७क पन। मैं जोतना चाहता हूँ।

कारुवाकी स्वामी ! स्वामी ! आप अस्वस्थ हैं।

अशोक नहीं जानता कि मैं अस्वस्थ हूँ या स्वस्थ पर मैं हारना नहीं चाहता। इसलिए मैंने कुमार को क्षमा कर दिया और उसका राज्य उसको लौटा दिया। यही नहीं मैंने एक और निश्चय किया है।

कारुवाकी क्या निश्चय किया है?

अशोक मैंने निश्चय किया है कि यदि संघमित्रा चाहे तो युवराज को अपना पति वरण कर सकती है।

कारुवाकी (ठगी-सी) स्वामी स्वामी जैठ की तपती दोपहरी में सावन की पूर्वी वायु के झोंके! रौरव नरक में स्वर्ग की सुगंध! विश्वास नहीं आता देव!

अशोक विश्वास करने के लिए अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ेगी देवि! परन्तु मैं जानना चाहता हूँ कि मैंने यह ठीक किया न? मेरे अंतर में कोई दुर्बलता तो नहीं घुस बैठी। अभी भी समय है। महेंद्र और भिक्षु उपगुप्त युवराज को लेने गये हैं। राधागुप्त संघमित्रा को देखने गये हैं। वे आते ही होंगे। उन सबके आने के पूर्व मैं अपनी दुर्बलता को जान लेना चाहता हूँ। (किसीके आने का स्वर) ओह वे आ गये।

कारुवाकी कौन है?

(प्रतिहारी का प्रवेश)

प्रतिहारी महाराज की जय हो। सेनापति ने संदेश भेजा है।

अशोक सेनापति ने संदेश भेजा है? क्या?

प्रतिहारी उन्होंने अभी कुछ समय पूर्व रणभूमि से एक [illegible]

को बंदी बनाया है।

अशोक भिक्षुणी को ? क्यों ? वह यहां क्या कर रही थी ?

प्रतिहारी देव ! जिस समय सैनिकों ने उसे देखा तो वह रण भूमि में घायलों की परिचर्या करती हुई घूम रही थी। जब उन्होंने उसे घेर लिया तो वह घबराई नहीं हँसकर बोली—मुझे बंदी बनाओगे ? मैं तो स्वयं आ रही थी। मैं तुम्हारे सम्राट् से मिलना चाहती हूं।

अशोक सच उसने ऐसा कहा ! वह डरी नहीं !

प्रतिहारी नहीं देव ! डर तो उससे स्वयं डरता है। उसकी आंखों में गहरा विश्वास भरा हुआ है। सैनिकों ने जब उससे चलने को कहा तो वह बोली—

कारुवाकी क्या बोली ?

प्रतिहारी वह बोली – मैं तुम्हारे साथ चलूंगी पर तब जब घायलों की परिचर्या पूरी हो जायगी। आप लोगों को बहुत जल्दी हो तो आप मेरी सहायता कर सकते हैं।

कारुवाकी फिर फिर क्या हुआ ?

प्रतिहारी फिर सम्राट् के सैनिकों ने उसकी सहायता की।

कारुवाकी क्या– क्या सैनिकों ने उसकी सहायता की ?

अशोक मेरे सैनिकों ने घायलों की सेवा की। ओह कितनी अद्भुत बात है ? कितनी शक्ति है उस भिक्षुणी में ?

कारुवाकी जो सैनिकों का हृदय जीत ले उसकी शक्ति साधारण नहीं हो सकती सम्राट् ?

अशोक प्रतिहारी हम उससे मिलना चाहते हैं। तुम शीघ्र

जाकर उसे ले आओ और देखो पूरे आदर के साथ लाना ।

प्रतिहारी जो आज्ञा देव !

(झुककर प्रणाम करता है और जाता है ।)

अशोक क्या विचार है देवि यह भिक्षुणी कौन हो सकता है? वह शस्त्रों से बिल्कुल भी नहीं डरती । उल्टा शस्त्रधारियों को उसने अपने वश में कर लिया ।

कारुवाकी मुझे लगता है कि इसमें कोई रहस्य है ।

अशोक रहस्य ? इसमें क्या रहस्य हो सकता है देवि ?

कारुवाकी उसने आपसे मिलने की इच्छा प्रकट की है न ।

अशोक हाँ-हाँ यही तो प्रतिहारी कहता था ।

कारुवाकी सम्राट् उस रहस्यमय भिक्षुणी का असमय में इस प्रकार रणभूमि में घूमना साधारण बात नहीं है । यह अवश्य कलिंग के राजकुल या राजतन्त्र से संबंध रखती है ।

अशोक तो

कारुवाकी तो क्या सम्राट् ! यह प्रतिशोध चाहती है और जब नारी प्रतिशोध लेने की बात सोच लेती है तो फिर यह किसी बात की चिंता नहीं करती । मुझे इसमें षड्यन्त्र जान पड़ता है । सम्राट् सावधान रहें ।

अशोक (मुस्कराकर) भिक्षु ठीक कहते थे कि राजकुलवासों को कारुणायसी बहुत कम होती है । समय विभाग षड्यन्त्र प्रतिशोध इनके अतिरिक्त उन्हें और कुछ नहीं

सूझता

(प्रतिहारी का प्रवेश)

अशोक क्यों ? क्या भिक्षुणी आ गई ?

प्रतिहारी *नहीं महाराज ! भिक्षुणी तो नहीं एक भिक्षु है।*

अशोक भिक्षु, इस समय ! कलिंग में क्या भिक्षुओं और भिक्षु-णियों के अतिरिक्त और कोई नहीं बचा है ?

कारुवाकी सुना है सम्राट् जो मर नहीं सके वे सब-के-सब पीले वस्त्र धारण करके भिक्षु बन गए हैं।

अशोक जान तो कुछ ऐसा ही पड़ता है देवि ! अच्छा प्रति-हारी ! ये भिक्षु कैसे हैं ?

प्रतिहारी बड़े क्रोधी हैं।

अशोक क्रोधी ! क्या तुमसे लड़ पड़े ?

प्रतिहारी सम्राट् क्षमा करें, मैंने जब उनसे रुकने को कहा तो वे लड़े ही नहीं मुझे मारने भी दौड़े।

अशोक मारने दौड़े ?

कारुवाकी महाराज ! सावधान रहें। ऊपर जो शांति दिखाई देती है उसके नीचे ज्वालामुखी धधक रहा है।

अशोक (प्रतिहारी से) अच्छा उन्हें आने दो।

प्रतिहारी जो आज्ञा।

(जाता है)

अशोक देवि ! ज्वालामुखी मेरे भी भीतर धधक रहा है। देखूं, शायद भिक्षु कोई राह सुझा सके।

कारुवाकी जो स्वयं राह से भटका हुआ है, वह दूसरे को क्या

मार्ग दिखायगा ?

अशोक वह न सही उसकी असफलता अवश्य मार्ग दिखायगी।

(भिक्षु का प्रवेश)

अशोक भंते ! मैं प्रणाम करता हूं।

भिक्षु प्रणाम की कोई आवश्यकता नहीं है सम्राट ! आवश्य कता है सतर्कता की। बुद्ध के वेसे चेनियां पाने वस्त्रों के नीचे शस्त्र छिपाये फिरते हैं।

अशोक (एकदम) क्या कहा ? कौन हो तुम ! (ध्यान से देख कर) ओह ! तुम हो बंधुजीव। समझा ! तुम क्रोध करके भिक्षुओं को बदनाम करते फिरते हो।

कारुवाकी अरे तुम तो पहचाने भी नहीं जाते।

भिक्षु देवी ! बंधुजीव को कोई पहचान ले तो फिर मान ही क्या है। तासली में सकड़ों व्यक्ति भिक्षु बंधुजीव से प्रव्रज्या ग्रहण करने को प्रस्तुत हैं।

कारुवाकी फिर यहां क्यों आये ? हमें प्रव्रज्या देने पर हम इतने मोक्ष नहीं हैं। हम विजयी हैं। जाओ जाकर उन्हें ही दीक्षा दो।

भिक्षु मैं द तो देता पर स्वयं कपटी होकर उनके कपट को पहचान गया हूं। इसलिए सम्राट् से गवाह करने आया हूं।

अशोक बोलो क्या कहना चाहते हो।

भिक्षु यही कि जो प्रतिशोध के लिए प्रव्रज्या ग्रहण करना चाहते हैं उन्हें प्रणाम किया जाता है या आनन्द लिया

जाता है।

अशोक तुम्हारे पास प्रमाण है ?

भिक्षु अंगुलीक का मस्तिष्क भले ही आकाश को छूता हो पर उसके पैर धरती पर लगे हैं। सम्राट् सावधान रहें। अभी जो एक भिक्षुणी आने वाली है···

कारुवाकी (एकदम) हां हां आनेवाली है। कौन है वह ?

अशोक वही भिक्षुणी जो युद्ध भूमि में घायलों की सेवा कर रही थी ?

भिक्षु जी हां वही। वह घायलों की सेवा नहीं कर रही थी, सम्राट् से मिलने का मार्ग सरल कर रही थी। मैंने उसे उसके असली रूप में देखा है।

अशोक कौन है वह ?

भिक्षु ठीक-ठीक पहचान नहीं पाया सम्राट्। पर है वह किसी बड़े कुल की। उसका रूप इस बात का साक्षी है। कल जब मैंने उसे देखा तो वह साधारण नारी के रूप में थी और तोसली के अधमरे और अर्द्ध विक्षिप्त व्यक्तियों को युद्ध के लिए भड़का रही थी।

अशोक सच ! पर वह भिक्षुणी क्यों बनी ?

भिक्षु इसलिए कि वह आप तक आ सके और···

कारुवाकी और·

भिक्षु अंगुलीक की जिह्वा उन शब्दों का उच्चारण नहीं कर सकती देवि।

अशोक हमारी जिह्वा कर सकती है। भिक्षुणी हमारी हत्या

करना चाहती है ।

भिक्षु सम्राट् ने ठीक समझा ।

अशोक (क्रोध) सम्राट् सदा ठीक समझते हैं और यह भी समझते हैं कि हत्यारे से अपनी रक्षा कैसे की जाती है ।

भिक्षु जानता हूँ सम्राट् । आवश्यकता पड़ने पर सनिक मिल सकें इसका प्रबंध कर आया हूँ । अच्छा प्रणाम । अब जाकर प्रव्रज्या देनी शुरू करता हूँ । दुःख यही है कि चंड गिरि के लिए काम बहुत हो गया है ।

(उठता है)

अशोक (एकदम) संघजीव !

भिक्षु सम्राट् !

अशोक (सहसा मौन हो जाते हैं)

भिक्षु क्या आज्ञा है सम्राट !

अशोक (चौंककर) कुछ नहीं जाओ ।

भिक्षु जो आज्ञा । (मुड़ता है)

अशोक (पुकारता है) वसुजीव । प्रव्रज्या का काम आज रोक सकता है ।

भिक्षु सम्राट् ! प्रव्रज्या रात में नहीं दी जाती ।

अशोक तो जाओ ।

(वसुघोष[1] का प्रस्थान । प्रतिहारी का प्रवेश)

प्रतिहारी सम्राट् की जय हो । भिक्षुणी उपस्थित है ।

---

[1] रंगमंच पर प्रस्तुत करते समय संघघोष का प्रसंग छोड़ा जा सकता है।

अशोक उसे आने दो। और सुनो तुम सब बाहर ठहरो।

प्रतिहारी जो आज्ञा!

(झुककर प्रणाम करता है और जाता है)

कारुवाकी सम्राट्! अब तो विश्वास करेंगे कि भिक्षुणी किसी षड्यंत्र की सूत्रधार है। वह प्रतिशोध लेने निकली है।

अशोक हम तुम यहीं हैं प्रिये! देखते हैं कि वह कैसा और किस प्रकार प्रतिशोध लेती है।

(भिक्षुणी का प्रवेश। पीत वस्त्र किंचित श्याम वर्ण आकर्षक नयन कलामय भ्रू-भंक और विश्वास भरनेवाली मुद्रा। लगता है किसी सुंदरी ने नाटकीय रंगमंच के लिए भिक्षुणी का रूप धारण किया है। सम्राट् उसे देखते हैं। कुछ सोचना चाहते हैं पर सहसा सम्राट की पद-मर्यादा का ध्यान करके दृष्टि घुमा लेते हैं। रानी कारुवाकी आश्चर्य से उसके अंग-अंग को देखती है और देखती रह जाती है। कई क्षण बीत जाते हैं तब सहसा सम्राट सम्भल कर बोलते हैं।)

अशोक तुम कौन हो?

भिक्षुणी जो सम्राट देख रहे हैं एक भिक्षुणी।

अशोक (कठोर होने की चेष्टा) इस समय रणभूमि में क्या कर रही थी?

भिक्षुणी वह भी सम्राट् सुन चुके हैं।

अशोक (अधिकार) सम्राट् तुम्हारे मुख से सुनना चाहते हैं।

जो दिखाई देता है वही सदा सत्य नहीं होता ।

भिक्षुणी (मुस्कराकर) सम्राट् सत्य और झूठ का निर्णय करना भी जानते हैं ?

कारुवाकी भिक्षुणी ! सम्राट् से विवाद न करके प्रश्न का उत्तर दो ।

भिक्षुणी (उसी तरह मुस्कराकर) ओह ! महारानी का सम्राट् की अवहेलना देखकर दुःख हुआ । परंतु महारानी ! प्रश्न का उत्तर न देने की मेरी कोई इच्छा नहीं है । मैं केवल यह जानना चाहती हूँ कि आप लोग मुझमें और मेरे कामों में दिलचस्पी क्यों लेते हैं ?

कारुवाकी क्योंकि तुम शत्रु-पक्ष की हो । तुम्हारा कुछ उद्देश्य हो सकता है ।

भिक्षुणी (हँसकर) उद्देश्य ! मेरा कुछ उद्देश्य हो सकता है । शत्रु का कुछ उद्देश्य हो सकता है । महारानी ! तुमने कुछ गलत नहीं समझा । मेरा उद्देश्य है ।

अशोक (एकदम) क्या उद्देश्य है तुम्हारा ? सच बताओ क्या तुम प्रतिशोध लेने आई हो ?

भिक्षुणी (सहसा कांपकर) किसका प्रतिशोध सम्राट् ?

अशोक अपने देश का प्रतिशोध । कलिंग को पराजित करने का प्रतिशोध (आवेश) लेकिन तुम भूलती हो । तुम प्रतिशोध नहीं ले सकोगी । तुम मेरी हत्या नहीं कर सकोगी — मैं — मैं —

(कटार खींच लेता है)

भिक्षुणी सम्राट् ! हत्या करते-करते आप सिवाय हत्याओं के और कुछ नहीं सोच सकते । आप उस बिल्ली की तरह हैं जो स्वप्न में भी छिछड़े ही देखती है ।

कारुवाकी भिक्षुणी ! तुम भारत-सम्राट् से बातें कर रही हो ।

भिक्षुणी देवि ! सत्य कहने के लिए कुछ नहीं सोचा जाता। (मुड़कर) सम्राट् ! मैंने कहा था कि मेरे आने का उद्देश्य है । वह उद्देश्य है आप तक कलिंग के निवासियों का संदेश पहुंचाना ।

अशोक कलिंग के निवासियों का संदेश ? क्या अभी कलिंग में संदेश भेजनेवाले बचे हैं ?

भिक्षुणी बचे क्यों नहीं हैं । सम्राट् अभी वे नारियां शेष हैं जिनके सुहाग की लाली रक्त की लाली बनकर धरती पर बह रही है जिनकी कोख के रत्न गिद्ध और गीदड़ों के भोजन बने हुए हैं । अभी वे वृद्ध बचे हैं जिनके नेत्र हैं पर दृष्टि नहीं है जिनके शरीर हैं पर प्राण नहीं हैं, जिनके कान हैं पर वे सुन नहीं पाते जो तिल-तिलकर प्राणदान कर रहे हैं--

अशोक भिक्षुणी भिक्षुणी बंद करो यह शब्दजाल

भिक्षुणी (अनसुना करके उसी तरह) सम्राट। अभी वे बालक भी बचे हुए हैं जो महानाश की दानवी-लीला का रक्त पीकर बढ़ रहे हैं । अभी वे खंडहर नष्ट नहीं हुए हैं जिनमें बसनेवाले उल्लू और चमगादड़ दिनरात आपका गुणगान

करते रहते हैं। सम्राट् ! इन सबने मुझसे कहा है कि मगध में उस अत्याचारी राजा से कह देना मरण तो संसार का नियम है उसके लिए उसने इतने प्रयत्न क्या किये। यदि वह जीवन के लिए इससे दशमांश शक्ति भी खर्च करता तो संसार विधाता को भूल जाता।

अशोक (चकित) भिक्षुणी भिक्षुणी !

भिक्षुणी मैं यही कहना चाहती थी। मैं यही कहने आई थी।

अशोक (खोया-खोया) भिक्षुणी तुम यही कहने आई हो। तुम प्रतिशोध लेने नहीं आई। नहीं तुम झूठ बोल रही हो। तुम अवश्य प्रतिशोध लेने आई हो।

भिक्षुणी मैं प्रतिशोध लेने आई हूँ। किसका प्रतिशोध, कैसा प्रतिशोध ! सम्राट् तुम यदि यह समझते हो कि तुमने कलिंगवासियों का नाश किया है तो तुम भूल करते हो। तुमने उनका नहीं अपना नाश किया है। पराजय उनकी नहीं, तुम्हारी हुई है। कलिंग हारकर भी जीत गया है। तुम जीतकर भी हार गये हो।

अशोक मैं जीतकर भी हार गया हूँ --

भिक्षुणी हाँ सम्राट् ! तुम जीतकर भी हार गये। तुमने जीवन का नाश किया है और जीवन का नाश करनेवाले सदा पराजित होते हैं।

कारुवाकी भिक्षुणी ! तुम्हारे वस्त्र पीत हैं पर तुम्हारी वाणी में आग है।

भिक्षुणी महारानी ! पीत वस्त्रों का अर्थ निष्क्रियता नहीं

भिक्षुणी सम्राट् ! हत्या करते-करते आप सिवाय हत्याओं के और कुछ नहीं सोच सकते । आप उस बिल्ली की तरह हैं जो स्वप्न में भी छिछड़े ही देखती है ।

कारुवाकी भिक्षुणी ! तुम भारत-सम्राट् से बातें कर रही हो ।

भिक्षुणी देवि ! सत्य कहने के लिए कुछ नहीं सोचा जाता । (मुड़कर) सम्राट ! मैंने कहा था कि मेरे आने का उद्देश्य है । वह उद्देश्य है आप तक कलिंग के निवासियों का संदेश पहुँचाना ।

अशोक कलिंग के निवासियों का संदेश ? क्या अभी कलिंग में संदेश भेजनेवाले बचे हैं ?

भिक्षुणी बचे क्यों नहीं हैं । सम्राट् अभी वे नारियाँ शेष हैं जिनके सुहाग की लाली रक्त की लाली बनकर धरती पर बह रही है जिनकी कोख के रत्न गिद्ध और गीदड़ों के भोजन बने हुए हैं । अभी वे वृद्ध बचे हैं जिनके नेत्र हैं पर दृष्टि नहीं है जिनके शरीर हैं पर प्राण नहीं हैं जिनके कान हैं पर वे सुन नहीं पाते जो तिल-तिलकर प्राणदान कर रहे हैं...

अशोक भिक्षुणी भिक्षुणी बद करो यह बकवास...

भिक्षुणी (अनसुना करके उसी तरह) सम्राट्। अभी वे बालक भी बचे हुए हैं जो महानाश की दानवी-लीला का रक्त पीकर बढ़ रहे हैं । अभी वे खण्डहर नष्ट नहीं हुए हैं जिनमें बसनेवाले उल्लू और चमगादड़ दिनरात आपका गुणगान

करते रहते हैं। सम्राट्! इन सबने मुझसे कहा है कि मगध के उस अत्याचारी राजा से कह देना मरण तो संसार का नियम है उसके लिए उसने इतने प्रयत्न क्यों किये। यदि वह जीवन के लिए इससे दशमांश शक्ति भी खर्च करता तो संसार विधाता को भूल जाता।"

अशोक (चकित) भिक्षुणी–भिक्षुणी!

भिक्षुणी मैं यही कहना चाहती थी। मैं यही कहने आई थी।

अशोक (खोया-खोया) भिक्षुणी तुम यही कहने आई हो। तुम प्रतिशोध लेने नहीं आई। नहीं तुम झूठ बोल रही हो। तुम अवश्य प्रतिशोध लेने आई हो।

भिक्षुणी मैं प्रतिशोध लेने आई हूं। किसका प्रतिशोध कैसा प्रतिशोध! सम्राट् तुम यदि यह समझते हो कि तुमने कलिंगवासियों का नाश किया है तो तुम भूल करते हो। तुमने उनका नहीं अपना नाश किया है। पराजय उनकी नहीं तुम्हारी हुई है। कलिंग हारकर भी जीत गया है। तुम जीतकरभी हार गये हो।

अशोक मैं जीतकर भी हार गया हूं–

भिक्षुणी हां सम्राट्! तुम जीतकर भी हार गये। तुमने जीवन का नाश किया है और जीवन का नाश करनेवाले सदा पराजित होते हैं।

कारुवाकी भिक्षुणी! तुम्हारे वस्त्र पीले हैं पर तुम्हारी वाणी में आग है।

भिक्षुणी महारानी! पीले वस्त्रों का अर्थ निष्क्रियता नहीं

है और क्रिया में सदा अग्नि होती है। अग्नि जीवन की शर्त है। वह प्रकाश भी देती है और जलाती भी है। यह दूसरी बात है कि कुछ लोग अपने-आपको जला लेते हैं कुछ अपनी दुर्बलता को।

कारुवाकी भिक्षुणी! अग्नि जीवन की शर्त हो सकती है पर शब्दजाल सत्य की शर्त नहीं है। वाक्-चातुरी से उद्देश्य पूरे नहीं हुआ करते।

भिक्षुणी जानती हूं महारानी! उद्देश्य वाक्-चातुरी से नहीं कर्म चातुरी से पूरे होते हैं पर बंदिनी को कर्म करने की स्वतन्त्रता कहां है?

अशोक तुम बंदिनी हो?

भिक्षुणी मेरा यहां होने का यही अर्थ है।

कारुवाकी (कठोर) तब तुम यह भी जानती होगी कि बंदिनी के साथ कैसा व्यवहार किया जाता है।

भिक्षुणी जानती क्यों नहीं। मगध में उनका सिर उड़ा दिया जाता है। (मुड़कर) कटार उठाइए, सम्राट्! उठाइए! मैं तैयार हूं।

(शीघ्रता से आगे बढ़कर सम्राट् के सामने बैठ जाती है)

कारुवाकी (कांपकर) भिक्षुणी!

अशोक (कांपकर) भिक्षुणी-भिक्षुणी! यह तुमने क्या कहा?

भिक्षुणी जो सत्य है।

अशोक जो सत्य है। नारी का सिर उड़ाना सत्य है? नारी की

हत्या करना सत्य है ? मैं नारी की हत्या कर सकता हूं ?
मैं नारी पर हाथ उठा सकता हूं ?

भिक्षुणी नहीं जानती थी कि मगध के सम्राट् क्रूर होने के साथ ढोंगी भी हैं। अभी तो वह कटार खींच रहे थे और अभी नारी-हत्या के विचार मात्र से ही उनके कोमल हृदय पर चोट लगी पर मैं पूछती हूं (आवेश) कलिंग-युद्ध में हताहत लक्ष-लक्ष अभागे सैनिकों के क्या मां बहन बहू बेटी नहीं थीं ? क्या वे मां बहन बहू बेटी नारी नहीं हैं ?

कारुवाकी फिर वही भावना फिर वही वाग्-जाल।

भिक्षुणी महारानी ! सत्य को बार-बार वाग्-जाल कहकर झुठलाया नहीं जा सकता। मैं कलिंग की आहत आत्मा की प्रतिनिधि हूं। मुझसे आप वीणा के मधुर संगीत की आशा नहीं कर सकतीं। आप तो नारी हैं। आप मेरे साथ चलिये। मैं आपको दिखाऊंगी कि कलिंग के हर नगर और गांव में ऐसी असंख्य नारियां हैं जो जीवित-सी मौन हो गई हैं। जिनकी आत्मा झुलस गई है (मुड़कर) सम्राट् क्या ही अच्छा हो कि आप उनके सिर काटकर उन्हें इस यातना से मुक्ति दें। जहां आपने इतना रक्त बहाया है वहां थोड़ा और बहाइए। इस रक्त-यज्ञ को पूर्ण कीजिए। अब तक आपने जो कुछ किया था वह हत्या थी पर अब जो कुछ करेंगे वह उनपर उपकार होगा।

अशोक (कांपकर) भिक्षुणी" भिक्षुणी बस करो बस करो। ऐसा लगता है जैसे

(सहसा सिर पकड़कर बैठ जाते हैं। रानी चौंकती है)

कारुवाकी महाराज! महाराज क्या बात है! क्या आप अस्वस्थ हैं?

अशोक (सम्भलकर) कुछ नहीं देवि! कुछ नहीं मैं स्वस्थ हूं। मुझे ऐसा लगा था जैसे मैंने यह वाणी पहले भी सुनी है। कलिंग के युवराज ने कुछ ऐसे ही कहा था।

भिक्षुणी कलिंग का युवराज और क्या कलिंग की साधारण नारी! आज सबकी भाषा एक है। भावना एक है। गति मति सब एक है। सबका एक स्वर है—आपने मनुष्य को नहीं शवों को नगरों को नहीं खंडहरों को जीता है। आप श्मशान के सम्राट् हैं।

अशोक यही उसने कहा था। बिल्कुल यही। मैं मनुष्यों का नहीं शवों का नगरों का नहीं खंडहरों का सम्राट् हूं। (एकदम) भिक्षुणी! तुम ठीक कहती हो। मैंने नर-हत्या की है। मैंने नगरों को खंडहर बनाया पर जो नगरों को खंडहर बना सकता है क्या वह खंडहरों को नगर नहीं बना सकता?

भिक्षुणी नहीं बना सकता।

अशोक नहीं बना सकता! क्यों?

भिक्षुणी क्योंकि वह पराजितों में प्रतिशोध की आग भड़का देता है और जो प्रतिशोध की भावना जगाता है वह जीत कर भी हार जाता है। सम्राट्! शस्त्रों की जीत जीत नहीं होती। जहां लोगों का इस प्रकार वध—मरण और

देश-निकाला हो ऐसा जीतना न जीतने के बराबर है।

अशोक (दोहराता हुआ) जहां लोगों का इस प्रकार बध—मरण और देश निकाला हो ऐसा जीतना न जीतने के बराबर है। जहां लोगों का इस प्रकार बध मरण और देश-निकाला हो (एकदम) भिक्षुणी! तुम कलिंग की साधारण नारी नहीं हो। तुम अवश्य किसी तत्त्वदर्शी की पुत्री हो। तुम मुझे बताओ कि क्या जीत का कोई और मार्ग भी होता है।

कारवाकी सम्राट्! आप अब बहुत थक गए हैं विश्राम करिये। भिक्षुणी से सवेरे बातें कर सकते हैं। मैं विश्वास दिलाती हूँ कि मैं आदरपूर्वक इन्हें अपने साथ रखूंगी।

अशोक देवी डर गई जान पड़ती हैं। अशोक इस प्रकार व्यथित होनेवाला नहीं है और फिर भिक्षुणी के शब्द मेरे घायल मन पर अमृत वर्षा रहे हैं। (मुड़कर) हां देवि! क्या तुम जीत का कोई और मार्ग जानती हो?

भिक्षुणी सम्राट् मुझसे पूछते हैं?

अशोक हां। कोई डर है?

भिक्षुणी है।

अशोक क्या?

भिक्षुणी मैं सम्राट् के शत्रु-पक्ष की हूं।

अशोक नहीं देवि! अब मेरा कोई शत्रु नहीं है। मैंने युवराज को क्षमा कर दिया है।

भिक्षुणी युवराज को?

अशोक हाँ कलिंग के युवराज को मैंने क्षमा कर दिया। उस का राज्य उसको लौटा दिया। मुझे खेद है कि उसके पिता और दूसरे संबंधी युद्ध में मारे गए। सुना है उसकी एक बहन बची है। पर अभी तक उसका कुछ पता नहीं लगा। और और यह अचरज की बात है कि उसका और तुम्हारा स्वर बहुत-कुछ मिलता है। विचार भी वे ही हैं। रूप भी कुछ-कुछ

भिक्षुणी (एकदम) यह संयोग की बात है, सम्राट्। नहीं तो कहाँ कलिंग के युवराज और कहाँ उसके एक साधारण नागरिक की पुत्री।

अशोक यह तो और भी गौरव की बात है, भिक्षुणी। कलिंग की सब संतान इतनी भयहीन है। भय मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है। जो भय को जीत लेता है वह महान है। तुम भी महान हो। युवराज भी महान है। मैं भी महानता चाहता हूँ। मैं तुम सबका मित्र बनना चाहता हूँ इसलिए मैंने राजकुमार को क्षमा कर दिया।

भिक्षुणी ठीक है सम्राट् परंतु

अशोक परंतु! परंतु क्या?

भिक्षुणी परंतु सम्राट्! युवराज आपकी क्षमा ग्रहण नहीं करेंगे।

अशोक युवराज मेरी क्षमा ग्रहण नहीं करेंगे?

भिक्षुणी नहीं।

अशोक नहीं! भिक्षुणी तुम अवश्य रहस्यमयी हो। तुम कौन

हो ? तुम कैसे जानती हो कि युवराज मेरी क्षमा ग्रहण नहीं करेंगे और क्यों नहीं करेंगे ?

भिक्षुणी क्योंकि वह वीर हैं और वीर पुरुष किसीकी क्षमा ग्रहण नहीं किया करते ।

अशोक (कांपकर) वीर पुरुष किसी की क्षमा ग्रहण नहीं किया करते । वीर पुरुष किसीकी क्षमा ग्रहण नहीं किया करते । यही यही उसने भी कहा था ।

भिक्षुणी उसने ठीक कहा था और वह अपने वचन पर दृढ़ रहेगा । वह आपके द्वारा दी गई प्राणों की भिक्षा नहीं लेगा ।

अशोक मेरे द्वारा दी गई प्राणों की भिक्षा नहीं लेगा ?

भिक्षुणी हां नहीं लेगा । कभी नहीं लेगा ।

अशोक (एकदम) कैसे नहीं लेगा । मैंने प्राणदंड की आज्ञा वापस ले ली है । वह मेरा बंदी है । मेरी आज्ञा के बिना कोई उसका बाल नहीं छू सकता । मैं सम्राट् हूं ।

भिक्षुणी (हंसकर) सम्राट् को अपनी आज्ञा पर बहुत घमंड है पर कलिंग का युवराज उसकी सीमा से बहुत दूर है ।

अशोक (क्रोध) इतना विश्वास । देखूंगा उसे कौन मारता है ?

भिक्षुणी उसका उस कर्तव्य मारेगा सम्राट् । कलिंग का रक्त-यज्ञ अभी पूर्ण नहीं हुआ है । अभी महाविनाश बाकी शेष है । अभी युद्ध और हृदय टूटने शेष हैं । अभी आपको अपनी और पराजय देखनी शेष है । अभी युवराज का बलिदान शेष है ।

(आवेश और दृढ़ता की इस भविष्यवाणी से सम्राट् और

कलिंग की राजकुमारी हैं। मेरा वध करने के लिए भिक्षुणी बनी थीं और मैं समझता हूं इन्हें काफी सफलता मिली है।

राधागुप्त (चकित) क्या क्या कहते हैं सम्राट्। (कटार खींचता है) कौन है जो सम्राट् का वध करना चाहता है?

अशोक (मुस्कराकर) कोई नहीं कोई नहीं महामात्य। विष्णुगुप्त चाणक्य के शिष्य को इस प्रकार करना शोभा नहीं देता। राजकुमारी मनुष्य का वध करने की एक नई रीति जानती हैं। वह मर जाता है पर उसके प्राण नहीं निकलते। शायद तुम्हें विश्वास नहीं आ रहा है। पर आ जायगा। अब तो हम चल रहे हैं। आओ राजकुमारी! आओ देवी कारुवाकी! तुम भी आओ प्रभात होनेवाला है। बंदीगृह में एक नव-प्रभात होने दो।

(सम्राट शीघ्रता से रंगमंच से बाहर जाते हैं। महारानी के साथ राजकुमारी भी उसी दृढ़ता से जाती हैं। राधा गुप्त सबसे पीछे कुछ खोया-खोया-सा जाता है।)

राधागुप्त समझ में नहीं आता कि यह क्या हो रहा है। सब केवल विचित्र अविश्वसनीय अद्भुत

(जाता है और परदा गिर जाता है)

तीसरा अंक

(रंगमंच पर रात्रि का गहन अंधकार। रह-रहकर पहरुवे की पुकार उठती है। मंच पर एक ओर दीपक का मंद प्रकाश हो रहा है। मानो वह वहीं सिमट गया है। कुछ क्षण बाद उस प्रकाश में एक छाया उभरती दिखाई देती है। यह एक युवक की छाया है जो एक शिला पर मौन बैठा हुआ किसी गहरी विचारधारा में निमग्न है। उसके शरीर की छाया बंदीगृह की एक भित्ति पर ऐसे पड़ रही है जैसे किसी कुशल चित्रकार ने निःश्वास को चित्रित किया हो। वह कलिंग का राजकुमार है और अशोक की आज्ञा से बंदीगृह में मृत्यु की राह देख रहा है। इसी समय एक ओर से राजकुमारी संघमित्रा और उसके साथ बंदीगृह का घातक चण्डगिरि वहाँ आते हैं। राजकुमारी ने सिर से पैर तक एक काला वस्त्र पहना है। उसकी आँख स्थिर है पर उसके नयन चमकते हैं। चण्डगिरि का विशाल शरीर उसकी बड़ी-बड़ी मूँछें और हाथ की बड़ी तलवार मन में भय पैदा करती है। आकर दोनों रंगमंच के प्रवेश-द्वार पर रुक जाते हैं। राजकुमारी मुड़ती है।)

संघमित्रा तुम यहीं बाहर ठहरो चण्डगिरि! मैं एकांत

कलिंग की राजकुमारी हैं। मेरा वध करने के लिए भिक्षुणी बनी थीं और मैं समझता हूं इन्हें काफी सफलता मिली है।

राधागुप्त (चकित) क्या क्या कहते हैं सम्राट्। (कटार खींचता है) कौन है जो सम्राट् का वध करना चाहता है?

अशोक (मुस्कराकर) कोई नहीं कोई नहीं महामात्य। विष्णुगुप्त चाणक्य के शिष्य को इस प्रकार डरना शोभा नहीं देता। राजकुमारी मनुष्य का वध करने की एक नई रीति जानती हैं। वह मर जाता है पर उसके प्राण नहीं निकलते। शायद तुम्हें विश्वास नहीं आ रहा है। पर आ जायगा। अब तो हम चल रहे हैं। आओ राजकुमारी! आओ देवी कारुवाकी! तुम भी आओ प्रभात होनेवाला है। बंदीगृह में एक नव प्रभात होने दो।

(सम्राट् शीघ्रता से रंगमंच से बाहर जाते हैं। महारानी के साथ राजकुमारी भी उसी दृढ़ता से जाती हैं। राधा गुप्त सबसे पीछे कुछ खोया-खोया-सा जाता है।)

राधागुप्त समझ में नहीं आता कि यह क्या हो रहा है। सब केवल विचित्र अविश्वसनीय अद्भुत

(जाता है और परदा गिर जाता है)

तीसरा अंक

(रंगमंच पर रात्रि का गहन अन्धकार। रह रहकर पहरुवे की पुकार उठती है। मंच पर एक ओर दीपक का मंद प्रकाश हो रहा है। मानो वह वहीं सिमिट गया है। कुछ क्षण बाद उस प्रकाश में एक छाया उभरती दिखाई देती है। वह एक युवक की छाया है जो एक शिला पर मौन बैठा हुआ किसी गहरी विचारधारा में निमग्न है। उसके शरीर की छाया वहां की एक भित्ति पर ऐसे पड़ रही है जैसे किसी कुशल चित्रकार ने विषाद को चित्रित किया हो। वह कलिंग का राजकुमार है और अशोक की आज्ञा से बंदीगृह में मृत्यु की राह देख रहा है। इसी समय एक ओर से राजकुमारी संघमित्रा और उसके पीछे बंदीगृह का घातक चण्डगिरि वहां आते हैं। राजकुमारी ने सिर से पैर तक एक काला वस्त्र पहना है। उसकी चाल स्थिर है पर उसके नयन चमकते हैं। चण्डगिरि का विशाल शरीर उसकी बड़ी-बड़ी मूछें और हाथ की बड़ी कटार मन में भय पैदा करती है। आकर दोनों रंगमंच के प्रवेश-द्वार पर रुक जाते हैं। राजकुमारी मुड़ती है।)

संघमित्रा तुम यहीं बाहर ठहरो चण्डगिरि।

कलिंग की राजकुमारी हैं। मेरा वध करने के लिए भिक्षुणी बनी थीं और मैं समझता हूँ इन्हें काफी सफलता मिली है।

राधागुप्त (चकित) क्या क्या कहते हैं सम्राट्। (कटार खींचता है) कौन है जो सम्राट का वध करना चाहता है?

अशोक (मुस्कराकर) कोई नहीं कोई नहीं महामात्य। विष्णुगुप्त चाणक्य के शिष्य को इस प्रकार करना शोभा नहीं देता। राजकुमारी मनुष्य का वध करने की एक नई रीति जानती हैं। वह मर जाता है पर उसके प्राण नहीं निकलते। शायद तुम्हें विश्वास नहीं आ रहा है। पर आ जायगा। अब तो हम चल रहे हैं। आओ राजकुमारी! आओ देवी कारुवाकी! तुम भी आओ प्रभात होनेवाला है। बंदीगृह में एक नव प्रभात होने दो।

(सम्राट् शीघ्रता से रंगमंच से बाहर जाते हैं। महारानी के साथ राजकुमारी भी उसी दृढ़ता से जाती हैं। राधा गुप्त सबसे पीछे कुछ खोया-खोया-सा जाता है।)

राधागुप्त समझ में नहीं आता कि यह क्या हो रहा है। सब कुछ विचित्र अविश्वसनीय अद्भुत

(जाता है और परदा गिर जाता है)

स्थिर है।

कंदमिर अच्छा देवि ! मैं बाहर ठहरता हूँ लेकिन ध्यान रखिए कि उषा की प्रथम किरण के उदय होने से पूर्व आपको चले जाना होगा।

संघमित्रा जानती हूँ।

(जाता है। संघमित्रा एक क्षण उसे जाते देखती है। फिर राजकुमार की ओर मुड़ती है पर आगे नहीं बढ़ती, वहीं खड़ी-खड़ी दीर्घ निश्वास लेती है।)

संघमित्रा (स्वगत—एक दीर्घ निश्वास लेकर) यह सब क्या है ? यह इतना आकर्षण क्यों है ? हृदय में यह धड़कन कैसी है ? यह स्पंदन किसका है ? (उच्छ्वसित स्वर) क्या प्रेम का ? (विचलित ऊँचा स्वर) क्या मैं सचमुच राजकुमार से प्रेम करती हूँ ? क्या मैं सचमुच उसे बचाना चाहती हूँ ? क्या उसे बचाना ठीक है ? वह शत्रु है। वह मेरे भाई मेरे देश मेरे सम्राट् का शत्रु है—हाँ हाँ वह शत्रु है। मैं शत्रु से प्रेम करती हूँ। मेरे देश का शत्रु मेरे हृदय सिंहासन पर आ बैठा है। आह—पर—पर शत्रु हुआ तो क्या ? वह वीर है वह निर्भीक है वह सुन्दर है। अभी उसी दिन जब इसका हाथी मगध की सेना में घुस गया था तो वह काई की तरह फटती चली गई थी। बार-बार असंख्य सैनिकों ने उसे घेरने की कोशिश की पर उसके छत्रधारी धारासार ने शरवृष्टि में सबको कठिन कर दिया। तब व कैसे संगठ में पैसे देव-सेनापति कुमार कार्तिकेय युद्ध

चाहती हूँ ।

चंडगिरि परंतु देवि ! सम्राट् की आज्ञा है कि

संघमित्रा सम्राट् की आज्ञा मैं जानती हूँ चंडगिरि ! और यह भी जानती हूँ कि तुमपर विश्वास किया जा सकता है । कुमार क्षमा मांग लें तो सम्राट् उन्हें मुक्त करने को तैयार हैं । मैं चाहती हूँ कि उन्हें

चंडगिरि देवि यह सब ठीक है लेकिन मेरा कर्तव्य मुझसे कहता है कि

संघमित्रा (विनय से) चंडगिरि ! मुझे राजकुमार से बहुत आवश्यक बातें करनी हैं । मैं चाहती हूँ कि भिक्षु उपगुप्त के आने से पूर्व उन्हें समाप्त कर लूं ।

चंडगिरि (चकित) क्या भिक्षु उपगुप्त यहां आयेंगे ।

संघमित्रा हां चंडगिरि ! वह सम्राट् से आज्ञा लेने गये हैं ।

चंडगिरि सम्राट् उन्हें आज्ञा देंगे ? एक भिक्षु को यहां आने की आज्ञा देंगे ? असंभव एकदम असम्भव !

संघमित्रा असम्भव नहीं चंडगिरि । उन्हें आज्ञा मिलेगी । सम्राट जो न कर सके उसे वह करना चाहते हैं । जाओ उनकी राह देखो ।

(चंडगिरि सहसा कुछ उत्तर न देकर शून्य में निहारता है ।)

संघमित्रा (विनम्र स्वर) जाओ चंडगिरि !

चंडगिरि (एकदम) जाऊं अच्छा जाता हूँ राजकुमारी ! लेकिन दंड तो स्थिर है ।

संघमित्रा जबतक सम्राट् दूसरी आज्ञा न भेजें तबतक वह

स्थिर है।

कार्त्तिकेय क्षमा देवि! मैं बाहर ठहरता हूँ लेकिन ध्यान रखिए कि उषा की प्रथम किरण के उदय होने से पूर्व आपको चले जाना होगा।

संघमित्रा जानती हूँ।

(जाता है। संघमित्रा एक क्षण उसे जाते देखती है। फिर राजकुमार की ओर मुड़ती है पर आगे नहीं बढ़ती, वहीं खड़ी-खड़ी दीर्घ निश्वास लेती है।)

संघमित्रा (स्वगत—एक दीर्घ निश्वास लेकर) यह सब क्या है? यह इतना आकर्षण क्यों है? हृदय में यह धड़कन कैसी है? यह स्पंदन किसका है? (उच्छ्वसित स्वर) क्या प्रेम का? (किंचित ऊंचा स्वर) क्या मैं सचमुच राजकुमार से प्रेम करती हूँ? क्या मैं सचमुच उसे बचाना चाहती हूँ? क्या उसे बचाना ठीक है वह शत्रु है। वह मेरे भाई मेरे देश मेरे सम्राट् का शत्रु है—शत्रु हां वह शत्रु है। मैं शत्रु से प्रेम करता हूँ। मेरे देश का शत्रु मेरे हृदय सिंहासन पर आ बैठा है। आह पर पर शत्रु हुआ तो क्या? वह वीर है वह निर्भीक है वह सुन्दर है। अभी उसी दिन जब इसका हाथी मगध की सेना में घुस गया था तो वह काई की तरह फटती चली गई थी। बार-बार मगध्य सैनिकों ने उसे घेरने की कोशिश की पर उसके—धरधारी आरोही ने दारदृष्टि से गयन्दो कठिन कर दिया। तब वे तेग सगत से जैसे देव-सेनापति कुमार कार्त्तिकेय

कर रहे हों। स्वयं सम्राट् ने एक दिन उनके शौर्य की प्रशंसा की थी और आज भी वह ऊपर से जितने कठोर हैं भीतर से उतने ही त्रस्त हैं। उन्होंने मुझसे पूछा था—क्या शस्त्र के अतिरिक्त किसीका मन करने की कोई और भी रीति होती है? यह बताता है कि वह भावोद्विग्न हो रहे हैं और उनका अतर्मन कुमार को क्षमा करने का मार्ग ढूंढ़ रहा है। मैं वही मार्ग उन्हें सुझाऊंगी और कुमार की रक्षा करूंगी। लेकिन···लेकिन कुमार नहीं नहीं अब मैं कुछ नहीं सोचूंगी। समय बहुत कम है और मुझे कुमार को क्षमा स्वीकार करने के लिए मना लेना है।

(वह शीघ्रता से आगे बढ़कर मंच के उस ओर आती है जहां दीपक के मंद प्रकाश में कुमार विचार-मग्न बैठा है। आहट पाकर वह चौंकता है।)

कुमार कौन? चंडगिरि! क्या समय हो गया?

संघमित्रा (मौन रहती है।)

कुमार बोलते नहीं? कौन है? (उठता है और राजकुमारी को कोई नारी समझकर स्तंभित रह जाता है।) कोई नारी! इस समय? यहां? कौन हैं आप?

संघमित्रा (मौन रहती है।)

कुमार आप बोलती नहीं। (पास आता है। ध्यान से राजकुमारी को देखता है और कांपकर पीछे हट जाता है।) आप राजकुमारी संघमित्रा! आप आई हैं। समझा!

संघमित्रा (पूर्ववत मौन)

कुमार आई हैं तो आप बोलती क्यों नहीं ?

संघमित्रा (मौन)

कुमार शायद यंग से कोई धृष्टता हो गई है। ओह समझा! मैं देवी को प्रणाम करना भूल गया। बंदी कलिंग-कुमार देवी संघमित्रा को प्रणाम करता है। (हाथ जोड़कर प्रणाम करता है) पधारिए, आपने बंदीगृह में आने का कैसे साहस किया। आई जो युद्ध भूमि में नहीं कर सका वह क्या आज बंदीगृह में करने आई है।

संघमित्रा (थोड़े-से आगे बढ़कर) मुझे प्रसन्नता है कि कुमार मुझे भूले नहीं हैं।

कुमार (हँसकर) देवि! कलिंग-कुमार की स्मृति इतनी क्षीण नहीं है कि वह अपने शत्रु को भी भूल जाय।

संघमित्रा (काँपकर) शत्रु! मैं आपकी शत्रु हूँ।

कुमार कलिंग की भूमि को कलिंग-पुत्रों के रक्त से प्लावित करनेवाले अत्याचारी अशोक की बहन शत्रु नहीं तो क्या हो सकती है?

संघमित्रा (मुस्कराकर) हो सकती है।

कुमार (चकित) हो सकती है?

संघमित्रा हाँ।

कुमार देवि! शायद पुरानी बातें याद कर रही हैं।

संघमित्रा बातें कभी पुरानी नहीं होतीं कुमार! स्मृति उन्हें सदा नया रखती है।

कुमार परंतु बातें पुरानी न होने पर भी उनका प्रभाव बदल

कर रहे हों। स्वयं सम्राट् ने एक दिन उनके शौर्य की प्रशंसा की थी और भाज भी वह ऊपर से जितने कठोर हैं भीतर से उतने ही त्रस्त हैं। उन्होंने मुझसे पूछा था—क्या शस्त्र के प्रतिरिक्त किसीका वध करने की कोई और भी रीति होती है? यह बताता है कि वह भासोद्विग्न हो रहे हैं और उनका अंतर्मन कुमार को क्षमा करने का मार्ग ढूंढ रहा है। मैं वही मार्ग उन्हें सुझाऊंगी और कुमार की रक्षा करूंगी। लेकिन... लेकिन कुमार नहीं नहीं अब मैं कुछ नहीं सोचूंगी। समय बहुत कम है और मुझे कुमार को क्षमा स्वीकार करने के लिए मना लेना है।

(वह शीघ्रता से आगे बढ़कर मंच के उस ओर आती है जहां दीपक के मंद प्रकाश में कुमार विचार-मग्न बैठा है। आहट पाकर वह चौंकता है।)

कुमार कौन? चंडगिरि! क्या समय हो गया?

संघमित्रा (मौन रहती है।)

कुमार बोलते नहीं? कौन है? (उठता है और राजकुमारी को कोई नारी समझकर स्तंभित रह जाता है।) कोई नारी! इस समय? यहां? कौन हैं आप?

संघमित्रा (मौन रहती है।)

कुमार आप बोलती नहीं। (पास आता है। ध्यान से राजकुमारी को देखता है और कांपकर पीछे हट जाता है।) आप राजकुमारी संघमित्रा! आप आई हैं। समझा!

संघमित्रा (पूर्ववत् मौन)

कुमार भाई हैं तो आप बोलती क्यों नहीं ?

संघमित्रा (मौन)

कुमार शायद बंदी से कोई धृष्टता हो गई है। ओह समझा! मैं देवी को प्रणाम करना भूल गया। बंदी कलिंग-कुमार देवी संघमित्रा को प्रणाम करता है। (हाथ जोड़कर प्रणाम करता है) पधारिए, आपने बंदीगृह में आने का कैसे साहस किया।...भाई जो युद्ध भूमि में नहीं कर सका वह क्या बहन बंदीगृह में करने आई है।

संघमित्रा (थोड़े-से आगे बढ़कर) मुझे प्रसन्नता है कि कुमार मुझे भूले नहीं हैं।

कुमार (हँसकर) देवि! कलिंग-कुमार की स्मृति इतनी क्षीण नहीं है कि वह अपने शत्रु को भी भूल जाय।

संघमित्रा (काँपकर) शत्रु! मैं आपकी शत्रु हूँ!

कुमार कलिंग की भूमि को कलिंग-पुत्रों के रक्त से प्लावित करनेवाले अत्याचारी अशोक की बहन शत्रु नहीं तो क्या हो सकती है?

संघमित्रा (दृढ़स्वर) हो सकती है।

कुमार (चकित) हो सकती है?

संघमित्रा हाँ।

कुमार देवि! शायद पुरानी बातें याद कर रही हैं।

संघमित्रा बातें कभी पुरानी नहीं होतीं कुमार! स्मृति सदा नया रखती है।

कुमार परंतु बातें पुरानी न होने पर भी उनका

जाता है, देवि !

संघमित्रा नहीं कुमार प्रभाव भी नहीं बदलता। वह केवल अपने से अधिक शक्तिशाली प्रभाव के पीछे छिप जाता है।

कुमार (हँसकर) शब्दों का यह मायाजाल नारी को ही शोभा देता है राजकुमारी !

संघमित्रा (पास आकर) शब्दों का मायाजाल ! कुमार। शब्दों का यह मायाजाल भावना की भित्ति पर उठता है। कुछ देर पहले तुमने भैया से कहा था—बस यही तुम्हारी वीरता है यही तुम्हारा शौर्य है इसी बल पर सम्राट् बने हो एक बंदी का सिर नहीं झुका सके। खोपड़ियाँ ठुकराने के लिए तो अनेक गीदड़ श्मशान में घूमा करते हैं। लेकिन वह वीर पुरुष का मार्ग नहीं है। इस सुंदर शब्द जाल के पीछे भी भावना की शक्ति थी।

कुमार नहीं राजकुमारी संघमित्रा ! उन शब्दों के पीछे भावना नहीं नग्न सत्य था।

संघमित्रा कुमार ! शव स्वयं जीव नहीं होता पर उसके अंतर में जीव समाया रहता है। नग्न सत्य और भावना की यही स्थिति है। भावना मनुष्य की वह शक्ति है जो उसे कभी क्लांत नहीं होने देती।

कुमार (हँसता है) देखता हूँ देवी संघमित्रा ने भी अपने भाई की भाँति न हारने का प्रण किया हुआ है।

संघमित्रा मैं प्रण में विश्वास नहीं करती। मैं उत्तर चाहती हूँ।

कुमार (गम्भीर शांत स्वर) उत्तर देना क्या कठिन काम नहीं है देवि ! कठिन काम है मात्वना करना और फिर तुम्हें यह नहीं भूलना चाहिए कि बन्धु के पास उत्तर देने का भी समय नहीं है। उसके जीवन की घड़ियां गिनी हुई हैं।

संघमित्रा (शांत) मैं उन्हीं घड़ियों की सीमा तोड़ने आई हूं कुमार !

कुमार (चकित) उन घड़ियों की सीमा तोड़ने आई हो ? मैं तुम्हारा आशय नहीं समझा देवि !

संघमित्रा आशय स्पष्ट है। मैं तुमसे तुम्हारे प्राणों का दान मांगने आई हूं कुमार !

(कुछ रहना चाहकर भी कांप उठती है।)

कुमार (चकित) मुझसे। (अट्टहास करता है) मुझसे खूब ! तभी तक की भांति नाट्य कला में प्रवीण जान पड़ती है। तभी अपने भाई के पास न जाकर मेरे पास आई हैं।

संघमित्रा (उसी तरह शांत) भया के पास जाकर क्या करती। वह प्राण से मारते हैं दे नहीं सकते। दे तुम ही सकते हो।

(कुमार कांपता है पर दूसरे ही क्षण तीव्र हो उठता है)

कुमार (तीव्र स्वर) तो तुम कहना चाहती हो कि मैं तुम्हारे भया के पास जाकर क्षमा मांगू ? उनकी चापलूसी करूं ?

संघमित्रा (एकदम व्याकुल स्वर में) नहीं नहीं !

कहती। मैं यह कह ही नहीं सकती।

कुमार तो क्या कहती हो ?

संघमित्रा मैं कहती हूं कि सम्राट् यदि तुम्हारी मुक्ति का आदेश भेजें तो उसे अस्वीकार मत करना।

कुमार (ठगा-सा) क्या 'क्या मगध का क्रूर सम्राट् मेरी मुक्ति का आदेश देगा ?

संघमित्रा दे सकता है।

कुमार पर क्यों ? कैसे ?

संघमित्रा क्यों और कैसे की जानने की इतनी चिंता मत करो कुमार ! मनुष्य कब क्या कर बैठेगा कौन जानता है। मगध-सम्राट की मानसिक स्थिति इस समय ऐसी है कि मेरे कहने पर वह तुम्हें क्षमा कर सकते हैं।

कुमार तुम्हारे कहने पर वह मुझे क्षमा कर सकते हैं ! तुम्हारे कहने पर ! तुम मेरी मुक्ति की प्रार्थना करोगी ?

संघमित्रा आज्ञा दो तो !

कुमार पर क्यों ?

संघमित्रा क्यों !

कुमार हां तुम मेरी मुक्ति की प्रार्थना क्यों करना चाहती हो ? तुम मुझे क्यों बचाना चाहती हो ? क्यों''क्यों''

संघमित्रा (खोई-खोई) क्यों करना चाहती हूं ? क्यों बचाना चाहती हूं ? (धीरे-से) तुम नहीं जानते ?

कुमार शायद ''शायद नहीं जानता। तभी तो पूछता हूं।

संघमित्रा (तनिक ग्लानित स्वगत) नहीं जानते तभी पूछते हो।

गई है। वह कह उठता है।)

कुमार राजकुमारी! राजकुमारी! तुम कहां हो? तुम बोलती क्यों नहीं? बोलो बोलो, तुम कहां हो?

संघमित्रा (आकर उनींदे स्वर में) कुमार! मैं यहीं हूं कुमार!

कुमार (अभी भी खोया-खोया) राजकुमारी! तुम कहां चली गई थीं। यह सब क्या था। क्या था यह मायाजाल? कैसी थी यह प्रणय-ज्वाला? किसने पैदा की यह प्रणय पिपासा? राजकुमारी! महानाश के समय भी तुम्हें यह प्रेम-लीला सुहाती है।

संघमित्रा (तड़पकर दृढ़ स्वर में) कुमार! नारी जिसे एक बार प्यार करती है उसके हाथों अपना रक्त उलीचा जाने पर भी वह उसे प्यार करती रहती है।

कुमार (कांपकर) राजकुमारी!

संघमित्रा (सहसा हंस पड़ती है) डर गए, कुमार! डर गए।

कुमार हां कुमारी! मैं डर गया। युद्ध भूमि में महाप्रलय देख कर भी जो नहीं डरा! पिता की भृकुटि देखकर भी जिसने आह तक नहीं की। मगध सम्राट् की भृकुटी भी जिसकी दृष्टि को नहीं झुका सकी वही कुमार इस क्षण डर गया।

संघमित्रा (हंसती हुई) अचरज है कि कुमार वीर होकर डर गये। क्या मैं जान सकती हूं कि कुमार के इस डर का कारण क्या है?

कुमार क्या ?

संघमित्रा (कांपकर) क्या ?

कुमार हां कुमारी ! मुझे डर है कि कहीं तुम्हारे प्रणय की वर्तमान स्थिति मेरी प्राणरक्षा का कारण न बने। तुम्हारा प्रेम मुझे पथ से विचलित न कर दे।

संघमित्रा (कांपकर) तो तो तुम जानते हो। तुम सब कुछ जानते हो। तुम्हें वे दिन याद हैं जब मगध के प्रतिथि के रूप में तुम मृगया खेलने हमारे यहां आये थे। जब सम्राट् ने तुम्हारे हस्तलाघव की प्रशंसा की थी और तुमने मेरे रूप की।

कुमार कलिंग का कुमार कुछ भी होने से पहले पुरुष है राजकुमारी ! और पुरुष जो प्रशंसनीय है उसकी प्रशंसा करना अपना कर्तव्य समझता है।

संघमित्रा (समझकर) जानती हूं और तभी पूछती हूं कि यदि मेरा प्रणय तुम्हारी प्राण-रक्षा चाहता है तो इसमें बुरा क्या है।

कुमार प्रणय प्राणों की भिक्षा नहीं मांगा करता राजकुमारी ! मगध सम्राट् ने मेरा सिर काट डालने की आज्ञा दी है। मैं उस आज्ञा का सम्मान करूंगा। कुछ क्षण बाद जब मनमोहिनी उषा जागरण का संगीत अलापती हुई आकाश मार्ग से उतरेगी तब उसी के साथ मेरी मृत्यु भी मेरा अभिनन्दन करने आयगी। मेरी मृत्यु में ही मेरा कल्याण है। कलिंग के महामात्य की सेना में जब उसकी [illegible]

युवतियों का सुहाग सिंदूर रक्त से धुल गया हो तो मैं तुम्हारी मांग में सिंदूर नहीं भर सकता। आज मेरी आँखें तुम्हारा रूप देखने में असक्त है। आज मेरे कान तुम्हारी प्रणय रागिनी सुनने के अयोग्य हैं।

संघमित्रा कुमार! कुमार!!

(चंडगिरि का प्रवेश)

चंडगिरि देवि!

संघमित्रा कौन! चंडगिरि तुम आ गये।

चंडगिरि हां देवि! आपको बहुत देर हो चुकी है।

संघमित्रा कोई आया?

चंडगिरि नहीं देवि!

संघमित्रा तो अभी ठहरो

चंडगिरि देवि राजा की आज्ञा का उल्लंघन हो रहा है।

संघमित्रा (विनय) थोड़ा बस थोड़ा और, चंडगिरि! बात अभी अधूरी है।

चंडगिरि देवी की जैसी आज्ञा।

(जाता है)

संघमित्रा (निश्वास) गया। उफ कुमार...

कुमार (व्यंग) देवि संघमित्रा प्रणय के लिए इतना झुक सकती हैं?

संघमित्रा (चोट खाकर) लक्ष्य प्राप्त करने के लिए कुछ भी करना चातुर्य कहलाता है कुमार!

कुमार (आवेश) पर मैं ऐसे चातुर्य से घृणा करता हूं देवि!

मैं अपना मस्तक कभी नहीं झुका सकता कभी नहीं। मैं मर सकता हूं पर किसी की दया का भिखारी नहीं बन सकता।

संघमित्रा (गहरा निश्वास) कुमार! तभी तो मैं तुम्हें प्रेम करती हूं।

कुमार परन्तु कुमारी! मैं मगध-सम्राट् का बंदी हूं। मुझे तुम से प्रेम करने का अधिकार नहीं है।

संघमित्रा (उसी तरह) कुमार मैं तुम्हें मुक्त करा सकती हूं। अभी इसी क्षण करा सकती हूं।

कुमार नहीं! मैं मगध-सम्राट् की दया नहीं चाहता। जो मेरे देश का दुश्मन और मेरे पिता का हत्यारा है मैं उसकी दया नहीं चाहता। मेरे शरीर में जब तक प्राण हैं तब तक मैं शत्रु की दया स्वीकार नहीं करूंगा। मैं कलिंग की वीरता को कलंकित नहीं करूंगा।

संघमित्रा (शांत) दया नहीं कुमार! यह दया नहीं है।

कुमार दया नहीं तो क्या है।

संघमित्रा पश्चात्ताप।

कुमार पश्चात्ताप! (सहसा अट्टहास) खूब। अत्याचारी अशोक और पश्चात्ताप! नाग के दांतों में अमृत! संघमित्रा तुम क्या कह रही हो?

संघमित्रा मैं ठीक कह रही हूं कुमार! तुम्हारे आने के बाद से सम्राट् पश्चात्ताप की आग में जल रहे हैं। तुम्हारे उन वाक्यों ने उन्हें आलोड़ित कर दिया है। मैंने चंडगिरि के

युवतियों का सुहाग सिंदूर रक्त से घुल गया हो तो मैं तुम्हारी मांग में सिंदूर नहीं भर सकता। आज मेरी आंखें तुम्हारा रूप देखने में असक्त है। आज मेरे कान तुम्हारी प्रणय रागिनी सुनने के अयोग्य है।

संघमित्रा कुमार ! कुमार !!

(चंडगिरि का प्रवेश)

चंडगिरि देवि !

संघमित्रा कौन ! चंडगिरि तुम आ गये।

चंडगिरि हां देवि ! आपको बहुत देर हो चुकी है।

संघमित्रा कोई आया ?

चंडगिरि नहीं देवि !

संघमित्रा तो अभी ठहरो

चंडगिरि देवि राजा की आज्ञा का उल्लंघन हो रहा है।

संघमित्रा (विनय) थोड़ा बस थोड़ा और, चंडगिरि ! बात अभी अधूरी है।

चंडगिरि देवी की जैसी आज्ञा।

(जाता है)

संघमित्रा (निश्वास) गया ! उफ कुमार'

कुमार (व्यंग) देवि संघमित्रा प्रणय के लिए इतना झुक सकती है ?

संघमित्रा (चोट खाकर) लक्ष्य प्राप्त करने के लिए कुछ भी करना चातुर्य कहलाता है कुमार !

कुमार (आवेश) पर मैं ऐसे चातुर्य से घृणा करता हूं देवि !

मैं अपना मस्तक कभी नहीं झुका सकता, कभी नहीं। मैं मर सकता हूँ पर किसी की दया का भिखारी नहीं बन सकता।

संघमित्रा (गहरा निश्वास) कुमार! तभी तो मैं तुम्हें प्रेम करती हूँ।

कुमार परन्तु कुमारी! मैं मगध-सम्राट् का बंदी हूँ। मुझसे तुम्हें प्रेम करने का अधिकार नहीं है।

संघमित्रा (उसी तरह) कुमार मैं तुम्हें मुक्त करा सकती हूँ। अभी इसी क्षण करा सकती हूँ।

कुमार नहीं! मैं मगध-सम्राट् की दया नहीं चाहता। जो मेरे देश का दुश्मन और मेरे पिता का हत्यारा है मैं उसकी दया नहीं चाहता। मेरे शरीर में जब तक प्राण हैं तब तक मैं शत्रु की दया स्वीकार नहीं करूँगा। मैं कलिंग की वीरता को कलंकित नहीं करूँगा!

संघमित्रा (शांत) दया नहीं कुमार! यह दया नहीं है।

कुमार दया नहीं तो क्या है।

संघमित्रा पश्चात्ताप!

कुमार पश्चात्ताप! (सहसा अट्टहास) खूब। अत्याचारी अशोक और पश्चात्ताप! नाग के दाँतों में अमृत! संघमित्रा तुम क्या कह रही हो?

संघमित्रा मैं ठीक कह रही हूँ कुमार! तुम्हारे आने के बाद से सम्राट् पश्चात्ताप की आग में जल रहे हैं। तुम्हारे वचनों ने उन्हें आलोडित कर दिया है। मैंने चंडगिरि से

(चंडगिरि का प्रवेश)

चंडगिरि देवि ! सम्राट् की आज्ञा पालन करने की वेला आ पहुंची है ।

संघमित्रा (व्याकुल) चंडगिरि ! दो क्षण और । बस वे आने ही वाले हैं ।

कुमार नहीं चंडगिरि अब किसी के आने की प्रतीक्षा नहीं है । तुम यहीं ठहरो और सुनो देवि संघमित्रा । मैं तुमसे प्रेम करता हूं । अपने जीवन से बढ़कर प्रेम करता हूं । तुमसे भी अधिक मैं अपने देश से प्रेम करता हूं । उससे भी अधिक मैं मनुष्य से प्रेम करता हूं । वही मनुष्य आज सोया हुआ है । उसे जगाने के लिए अभी और बलिदान की ज़रूरत है

संघमित्रा (टोककर) कुमार सुनो तो सुनो

कुमार मैं बहुत सुन चुका कुमारी ! अब तुम्हें सुनना है । सुन लो कलिंग-कुमार प्राणों से नहीं डरता नारी से नहीं डरता । संघमित्रा ! यदि तुम सचमुच मुझसे प्रेम करती हो तो समझ लो कि तुम्हारा प्रियतम कलिंग के रक्तयज्ञ से अपने रक्त की पूर्णाहुति देकर उसे संपूर्ण करना चाहता है । और वह तुम्हें भी निमन्त्रण देता है कि तुम भी इस यज्ञ में आहुति दो अपने प्रणय का बलिदान करो, कलिंग नारियों के रोदन में अपना रोदन मिला दो जिससे धरती-अंबर कांप उठें महानाश पूर्ण हो जाय और महानिशा के बाद उषा का उदय हो

(बोलता-बोलता वह सहसा कुछ-से बने चंडगिरि की ओर बढ़ता है।)

कुमार आओ चंडगिरि, कहाँ है तुम्हारी कटार। तुम्हारे हाथों से मेरे हाथों में कम शक्ति नहीं है।

(चंडगिरि पागल-सा समझ ही नहीं पाता। बिजली-सी कौंधती है। कुमार कटार छीन लेता है। चंडगिरि और संघमित्रा भागकर दौड़ते हैं।)

चंडगिरि कुमार, क्या करते हो? मेरी कटार दो। मेरी कटार दो।

संघमित्रा कुमार! कुमार, कटार छोड़ दो। (दोनों कटार छीनना चाहते हैं पर उससे पूर्व कुमार उसे अपनी छाती में भोंक लेते हैं। राजकुमारी चीखती है।) आह कुमार! कुमार! तुमने क्या किया? तुमने कटार छाती में मार ली। आह कोई है, चंडगिरि!

(कटार निकालना चाहती है। कुमार रोकता है)

कुमार चंडगिरि! चंडगिरि! कटार निकाल लो।

चंडगिरि (कटार खींचता है और कुमार आह करता है) मैं जाता हूँ और सम्राट् से कहता हूँ कि कुमार ने अपने हाथ से अपनी छाती में कटार भोंककर अपने प्राणों का अंत कर लिया (भागना चाहता है)

संघमित्रा (व्याकुल) चंडगिरि! कटार मुझे दो। यह कटार मुझे दते जाओ।

चंडगिरि (मुड़कर) राजकुमारी! चंडगिरि इतना मूर्ख

पहुँचा तो सब कुछ समाप्त हो चुका था। कुमार ने आपकी दया स्वीकार नहीं की।

अशोक (सहसा महेंद्र को देखकर) कुमार ने मेरी दया स्वीकार नहीं की? (सहसा कुमार के पास बैठ जाता है) कुमार! कुमार! तुम जीत गये। मैं पराजित हो गया। तुम्हारी बहन ने ठीक कहा था कि तुम मेरी दया स्वीकार नहीं करोगे। कभी नहीं करोगे। तुमने सचमुच यही किया।

संघमित्रा (आँखों में आँसू भरे चकित) कुमार की बहन! कहाँ है वह? क्या वह आपके पास आई थी?

(सहसा रामागुप्त के साथ महारानी कारुवाकी और भिक्षुणी वेशधारी राजकुमारी का प्रवेश। महारानी दुखी हैं और राजकुमारी के मुख पर अतिशय करुण गंभीरता है।)

रामागुप्त इधर से महारानी! इधर आइये।

(वे सब वहाँ आते हैं जहाँ कुमार चिरनिद्रा में सोया है। उन्हें देखकर संघमित्रा खड़ी हो जाती है।)

संघमित्रा कौन भाभी और "और कलिंग की राजकुमारी।

कारुवाकी हाँ कल जो कलिंग की राजकुमारी थी वही आज भिक्षुणी है लेकिन यह क्या हुआ, संघमित्रा! तुम इतना भी नहीं कर सकीं।

संघमित्रा प्रेम के पाश से मानवता का पाश प्रबल निकला भाभी! कुमार ने सम्राट् को पराजित करने के लिए नारी का दर्प चूर कर डाला।

राजकुमारी नहीं देवि संघमित्रा! यह कुछ नहीं कुमार केवल कलिंग का रक्त-स्नान संपूर्ण करना चाहते थे। और वही उन्होंने किया। रात्रि के बाद उषा जब अपने प्राणों का हनन कर डालती है तभी अरुणोदय होता है।

(कहते-कहते भिक्षुणी वेशधारी राजकुमारी घुटने टेककर कुमार के पास बैठना चाहती है। सहसा प्रेम का आवेग उमड़ता है। वह दोनों हाथों से कुमार को पकड़कर चीत्कार कर उठती है) भैया भैया

(तब सहसा अशोक दोनों हाथों से मुंह ढककर पीछे हट जाते हैं। चण्डगिरि राधागुप्त और महेंद्र भी मुड़ते हैं। संघमित्रा शीघ्रता से राजकुमारी को छाती से चिपका लेती है और रोती हुई कहती है।)

संघमित्रा बहन बहन हम दोनों आज दुखिनी हैं। हमें इस शोक का अन्त करना है। हमारे शोक में ही मानवता का कल्याण है।

(भिक्षु उपगुप्त फिर आगे आते हैं)

उपगुप्त तथागत के मार्ग पर शोक के लिए स्थान नहीं है महारानी!

(राजकुमारी सहसा अपने को छुड़ाकर उन्हें देखती है)

राजकुमारी (तीव्रता से) मैं नहीं चाहती तथागत का पथ। न लो अपने वचन। मैं राजकुमारी बनना चाहती हूं। मैं फिर साधारण नारी बनना चाहती हूं। मैं प्रतिशोध लेना चाहती हूं। मैं कलिंग के इस निर्मम महानाश का

उपसंहार

(पहले अंकवाला दृश्य। अशोक गंभीर मुद्रा में इधर-से-उधर, उधर-से-इधर घूम रहे हैं। उसे पास आकर देखें तो वह बहुत उद्विग्न हैं। रह-रहकर वह खड़े होकर शून्य में दृष्टि गड़ाकर देखने लगते हैं। फिर आप-ही-आप बोल उठते हैं।)

अशोक (स्वगत) क्या से क्या हो गया। पिछले दस दिन में यह व्यथा जो किसी कारण अचानक उमड़ पड़ी थी मुझे कहां ले उड़ी। जैसे मैं अब तक बराबर कोई भयंकर स्वप्न देख रहा था मैं अपनेको कितना शक्तिशाली समझता था। मेरा नाम ही संसार को त्रास देनेवाला था। मैं साकार भय था पर हुआ यह कि अवसर आने पर मैं एक बंदी से अपनी आज्ञा नहीं मनवा सका। दस दिन तक जिसने धरती को मुरदों और घायलों से भर दिया, जिसने इतनी हत्याएं कीं कि उनकी गिनती तक नहीं हो सकती उसीने जब चाहा तो वह एक मनुष्य के प्राण नहीं बचा सका। (ऊपर देखकर) मैं एक व्यक्ति के प्राण नहीं बचा

सका। उस एक ने जैसे मेरे शक्तिशाली जीवन को झक-
झोर दिया। उसने मुझे चुनौती दी—तू शक्तिशाली नहीं
खोपड़ी ठुकरानेवाला गीदड़ है। गीदड़ (कातर भाव)
गीदड़ मैं गीदड़ और और इससे भी अचरजवाली
बात तो यह है कि मैं इस चुनौती को झुठला नहीं सका।
उल्टा यह ज्ञान मुझे नया मार्ग सुझानेवाला बन गया।
देखते-देखते जैसे भयंकर स्वप्नवाली रात बीत गई।
उज्ज्वल प्रभात आ पहुँचा। दर्शन धुल गया, मेरी
आत्मा निमग्न होने लगी पर पर हाहाकार वह
दारुण चीत्कार वह असंख्य जीवित चिताओं से उठनेवाली
संतप्त आहें वह खंडहरों से उठती वस्तुओं की हू-हू
और श्मशानों की चीं-चीं वह आकाश बढ़ वनिताओं
के नेत्रों से बरसी हुई ज्वाला वह वह क्या मुझे नई
सृष्टि करने देगी। उसे भूलकर क्या मैं नव निर्माण कर
सकूँगा (एक क्षण मौन रहकर) लेकिन भिक्षु कहते हैं—
हाँ तुम नव निर्माण कर सकोगे। तथागत का मार्ग उसी
नव-निर्माण का संदेशवाहक है (भावावेश) तथागत का
मार्ग। अहिंसा और मानवता का मार्ग क्या मैं उसपर
चल सकूँगा? क्या मैं प्रेम से दिग्विजय कर सकूँगा? कुछ
समझ में नहीं आता क्या यह युद्ध बंद हो जायगा (कटार
फेंककर) क्या ये अस्त्र शस्त्र समाप्त हो जायेंगे क्या ये
संघर्ष मिट जायगे ?

(महारानी कारुवाकी का

पुस्तक	मूल्य
महिला की शक्ति (प्रेम)	१ ५
सत्याग्रह-मीमांसा	१'५
बुद्धवाणी (वियोगी हरि)	१
संत-सुधासार ( )	११ ०
संतवाणी (वियोगी हरि)	२
प्रार्थना	'५
अयोध्याकाण्ड „	१
भागवत-धर्म (ह. उ)	६ ५
श्रेयार्थी जमनालालजी	६ ५
स्वतंत्रता की ओर „	४'
बापू के आश्रम में	१
मानवता के झरने (भाग)	१'५
बापू (घ बिड़ला)	२
रूप और स्वरूप „	११
डायरी के पन्ने	१
ध्रुवोपाख्यान „	२५
स्त्री और पुरुष (टॉल्स्टॉय)	१
मेरी मुक्ति की कहानी	१'५
प्रेम मे भगवान „	४
जीवन-साधना „	१'२५
कलवार की करतूत	१५
हमारे जमाने की गुलामी „	'७५
बुराई कैसे मिटे ? „	१
बालकों का विवेक „	५०
हम करें क्या ?	१'५
धर्म और सदाचार	१'२५
अंधेरे में उजाला „	१'५
कल्पवृक्ष (वा अग्रवाल)	२
हिमालय की गोद में	२
साहित्य और जीवन	२
कब्ज (म प्र पोद्दार)	१ ०
राजनीति-प्रवेशिका(सोरमी)	१
जीवन-संदेश (ख जिब्रान)	१'२५
प्रयोग के फूल	१

पुस्तक	मूल्य
तुकाराम-गाथासार	१'२०
धर्म का इतिहास (संक्षिप्त)	१ ०
पंचदशी (सं म जैन)	१'५
सप्तदशी	२
रीढ़ की हड्डी	१
अमिट रेखाएं	१
एक आदर्श महिला	१
राष्ट्रीय गीत	२५
तामिल-वेद (तिरुवल्लुवर)	१'५
थेरी-गाथाएं	१ ५
बुद्ध और बौद्ध साधक	१'५
हमारे गांव की कहानी	१ ५
साग-भाजी की खेती	
खेती के साधन	१ २५
फलों की खेती	२'५
पशुओं का इलाज (प प्र)	'५
रामतीर्थ-संदेश (१ भाग)	१ १२
रोटी का सवाल (क्रोपा)	३
नवयुवकों से दो बातें	० १७
पुरुषार्थ (डॉ भगवानदास)	६
काश्मीर पर हमला	२
शिष्टाचार	५
भारतीय संस्कृति	१'५
आधुनिक भारत	५
मैं तन्दुरुस्त हूं या बीमार ?	० ५
गांधीजी की छत्रछाया में	२'५
भागवत-कथा	१'५
जय अमरनाथ	१'५
प्रगति के पथ पर (७ भाग)	२ १
संस्कृत-साहित्य-सौरभ	
(१५ पुस्तकें) प्रति पुस्तक	१७
समाज-विकास-माला	
(११ पुस्तकें) प्रति पुस्तक	१७